क्या ईश्वर मर गया है?

जो मर जाए वह ईश्वर ही नहीं

एक छोटी सी कहानी से मैं आज की चर्चा प्रारंभ करना चाहूंगा।

एक सुबह की बात है।

एक पहाड़ से एक व्यक्ति गीत गाता हुआ नीचे उतर रहा था। उसकी आंखों में किसी बात को खोज लेने का प्रकाश था। उसके हृदय में किसी सत्य को जान लेने की खुशी थी। उसके कदमों में उस सत्य को दूसरे लोगों तक पहुंचा देने की गति थी। वह बहुत उत्साह और आनंद से भरा हुआ प्रतीत हो रहा था।

अकेला था वह पहाड़ के रास्ते पर और नीचे मैदान की ओर उतर रहा था। बीच में उसे एक बूढ़ा आदमी मिला, जो पहाड़ की तरफ, ऊपर को चढ़ रहा था।

उस व्यक्ति ने उस बूढ़े आदमी से पूछा—तुम किसलिए पहाड़ पर जा रहे हो?

उसे बूढ़े ने कहा—परमात्मा की खोज के लिए!

और वह व्यक्ति, जो पहाड़ से नीचे की तरफ उतरा आ रहा था, यह सुनकर बहुत जोर से हंसने लगा और उसने कहा—क्या यह भी हो सकता है, तुम्हें वह दुखद समाचार अभी तक नहीं मिला?

उस बूढ़े आदमी ने पूछा—कौन-सा समाचार है?

तो उस व्यक्ति ने कहा—क्या तुम्हें अभी तक पता नहीं कि ईश्वर मर चुका है? तुम किसे खोजने जा रहे हो? क्या जमीन पर और नीचे मैदानों में अब तक यह खबर नहीं पहुंची कि ईश्वर मर चुका है? मैं पहाड़ से ही आ रहा हूं। मैं भी ईश्वर को खोजने गया था, लेकिन वहां जाकर मैंने भी ईश्वर को नहीं, ईश्वर की लाश को पाया। और क्या दुनिया तभी विश्वास करेगी, जब उसे अपने हाथों से दफना देगी? क्या यह खबर अब तक नहीं पहुंची?

मैं वही खबर लेकर नीचे उतर रहा हूं कि मैदानों में जाऊं और लोगों को कह दूं कि पहाड़ों पर जो ईश्वर रहता था, वह मर चुका है। लेकिन उस बूढ़े आदमी ने विश्वास नहीं किया। साधारणतः कोई मर जाए तो उसकी बात पर हम विश्वास ही नहीं करते हैं। ईश्वर के मरने पर कौन विश्वास करता है? उस बूढ़े आदमी ने समझा कि युवक पागल हो गया है। वह बूढ़ा अपने रास्ते पर बिना कुछ कहे, पहाड़ चढ़ने लगा और उस युवक ने सोचा कि अजीब है यह आदमी, जिसे खोजने जा रहा है, वह मर चुका है और फिर भी खोज को जारी रखना चाहता है। लेकिन वह नीचे की तरफ उतरता रहा। रास्ते में और एक साधु मिला, जो आंखें बंद किये हुए ध्यान में लीन था। उस युवक ने उसे झकझोरा और कहा—किसका चिंतन करते हो? किसका ध्यान करते हो? उसने कहा—परमात्मा का ध्यान करता हूं। वह युवक हंसा और बोला—मालूम होता है यह खबर ले जाने का दुखद काम मुझे ही करना पड़ेगा कि तुम जिसका ध्यान कर रहे हो, बहुत समय हुआ वह मर चुका है। उसका ध्यान करने से कुछ भी नहीं होगा। अब उसके स्मरण करने से कुछ भी न होगा और अब उसके गीत और प्रार्थनाएं कोई भी फल नहीं लायेंगे, क्योंकि मुरदा कुछ नहीं कर सकता, मुरदा परमात्मा भी क्या करेगा? और वह युवक नीचे उतर गया। और उसी पहाड़ पर मैं भी गया था और मेरी भी उससे मुलाकात हुई। वही, मैं आपसे कहना चाहता हूं। उस आदमी ने मुझसे भी पूछा कि कहां जाते हो? इसके पहले कि मैं उसको कोई उत्तर देता, मैंने उससे पूछा—तुम कहां जाते हो? उसने कहा—एक खबर मेरे पास है, उसे दुनिया को मुझे कहना है। और उसने कहा कि ईश्वर मर गया है, तुम्हें पता चला है? मैंने उस आदमी से कहा—मेरे पास भी एक खबर है और मुझे भी वह दुनिया से कहनी है। और क्या तुम्हें पता है कि जो ईश्वर मरा है वह ईश्वर था ही नहीं। एक झूठा ईश्वर मर गया है। कुछ लोग उस झूठे ईश्वर के जिंदा होने के खयाल में हैं और कुछ लोग उस झूठे ईश्वर के मर जाने के खयाल में हैं। लेकिन जो सच्चा ईश्वर था, वह अब भी है और हमेशा रहेगा। उससे मैंने कहा—तुम एक खबर दुनिया को कहना चाहते हो और मैं भी एक खबर कहना चाहता हूं कि जा मर गया है, वह सच्चा ईश्वर नहीं था, क्योंकि जो मर सकता है, वह जीवित ही न रहा होगा। जीवन का मृत्यु से कोई संबंध नहीं है। जहां जीवन है, वहां मृत्यु नहीं है। और जहां मृत्यु हो, जानना कि जीवन भ्रामक था, झूठा था, कल्पित था। मृत्यु ही सत्य थी। वह जो मरा हुआ है, वही केवल मरता है। जो जीवित है, उसके मरने की कोई संभावना नहीं है। जीवन के मर जाने से ज्यादा असंभव बात और कोई नहीं हो सकती है। ईश्वर तो समग्र जीवन का नाम है।

क्या ईश्वर मर गया है?

वह आदमी दुनिया के कोने-कोने में अपनी खबर कहता फिरता है और मुझे भी उसका पीछा करना पड़ रहा है। जहां भी वह जाता है, मुझे भी वहां जाना पड़ता है। जरूर आपसे भी उसने यह बात आकर कही होगी कि ईश्वर मर गया। बहुत तरकीबें हैं उस बात के कहने की, बहुत रास्ते हैं, बहुत व्यवस्थाएं हैं। बहुत ढंगों से आप तक भी यह खबर निश्चित ही पहुंच गयी होगी कि ईश्वर मर चुका है।

मैं आपसे जो दूसरी बात कहना चाहूंगा इन आने वाले चार दिनों की चर्चाओं में वह यह कि जो ईश्वर मर चुका है, वह जिंदा ही नहीं था। कुछ लोगों ने उसे एक झूठा जीवन दे रखा था। और अच्छा ही हुआ कि वह मर गया। और अच्छा ही होता कि वह कभी पैदा ही न होता। और अच्छा हुआ होता कि वह बहुत पहले मर गया होता। तो यह खबर सुखद है, दुःदुखद नहीं। लोगों ने आपसे बहुत रूपों में कहा होगा कि धर्म की मृत्यु हो गयी है। यह बहुत अच्छा हुआ है, क्योंकि जो धर्म मर सकता है, वह मर ही जाना चाहिए। उसे जिंदा रखने की कोई जरूरत नहीं है। जब तक झूठा धर्म जिंदा रहेगा और झूठा ईश्वर जीवित मालूम पड़ेगा, तब तक सच्चे ईश्वर को खोजना अत्यंत कठिन है। सच्चे ईश्वर और हमारे बीच में, झूठे ईश्वर के अतिरिक्त और कोई भी नहीं खड़ा हुआ है। मनुष्य और परमात्मा के बीच में एक झूठा परमात्मा खड़ा हुआ है। मनुष्य और धर्म के बीच में अनेक झूठे धर्म खड़े हुए हैं। वे गिर जाएं, वे जल जाएं और नष्ट हो जाएं तो मनुष्य की आंखें, उसकी तरफ उठ सकती हैं, जो कि सत्य है और परमात्मा है।

कौन-सा ईश्वर झूठा है? मंदिरों में जो पूजा जाता है, वह ईश्वर झूठा है, क्योंकि उसका निर्माण मनुष्य ने किया है। मनुष्य ईश्वर को बनाये, इससे ज्यादा झूठी और कोई बात नहीं हो सकती है। ईश्वर ने मनुष्य को बनाया होगा, यह तो हो भी सकता है। लेकिन यह कैसे हो सकता है कि मनुष्य ईश्वर को बना ले। लेकिन जितने प्रकार के मनुष्य हैं, उतने प्रकार के ईश्वर हमने निर्मित कर लिए हैं। और जितने प्रकार के मनुष्य हैं, उतने ही प्रकार के मंदिर हैं, उतने ही प्रकार की मस्जिदें हैं, उतने ही प्रकार के गिरजाघर हैं और न मालूम क्या-क्या हैं। सब ने मिलकर, न मालूम कितने प्रकार के ईश्वर ईजाद कर लिए हैं। ये ईश्वर निश्चित ही झूठे हैं। ईश्वर ईजाद नहीं किया जा सकता है, 'इनवेंट' नहीं किया जा सकता। न तो कोई उसे पत्थर के द्वारा निर्मित कर सकता है, शब्दों के द्वारा, न रंगों के द्वारा और न रेखाओं के द्वारा, क्योंकि जो भी हम निर्मित कर सकेंगे, वह हमसे भी ज्यादा कच्चा, हमसे भी ज्यादा झूठा और हमसे भी ज्यादा क्षणभंगुर होगा।

मनुष्य ईश्वर को निर्मित नहीं कर सकता है, लेकिन ईश्वर को उपलब्ध कर सकता है। मनुष्य ईश्वर को ईजाद नहीं कर सकता, ईश्वर का आविष्कार नहीं कर सकता। 'इनवेंट' नहीं कर सकता, पर 'डिस्कवर' कर सकता है। मनुष्य ने जितने भी ईश्वर ईजाद किये हैं, सब झूठे हैं। और इन्हीं धर्मों और रिलीजंस के कारण 'रिलीजन', धर्म का दुनिया में कहीं कोई पता भी नहीं मिलता। जहां भी जाइयेगा, कोई न कोई ईश्वर बीच में आ जाएगा और कोई न कोई धर्म। और धर्म से आपका कोई भी संबंध नहीं हो सकेगा। हिंदू बीच में आ जाएगा, ईसाई, मुसलमान, जैन और बौद्ध, कोई न कोई बीच में आ जाएगा। कोई न कोई दीवाल खड़ी हो जाएगी, कोई न कोई पत्थर बीच में अटक जाएगा और द्वार बीच में बंद हो जाएगा। ये द्वार परमात्मा से मनुष्य को तोड़ते ही हैं, मनुष्य से भी मनुष्य को तोड़ देते हैं।

मनुष्य से मनुष्य को अलग करने वाले कौन हैं? एक मनुष्य और दूसरे मनुष्य के बीच कौन-सी दीवाल है? पत्थर की, मकानों की? नहीं। मंदिरों की, मस्जिदों की, धर्मों की, विचारों की दीवालें हैं, जो एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से दूर कर देती हैं, वे दीवालें मनुष्य को परमात्मा से कैसे मिलने देंगी? यह असंभव है। अगर मैं आपसे दूर हो जाता हूं तो यह कैसे संभव है कि जो चीज मुझे आपसे दूर कर देती हो, वह मुझे उससे जोड़ दे जो कि सबका नाम है। यह संभव नहीं है। लेकिन इस तरह का ईश्वर, इस तरह का धर्म, हजारों-हजार बरसों से मनुष्य के मन पर छाया हुआ है। और यही कारण है कि पांच-छहः हजार बरसों से निरंतर चिंतन, मनन और ध्यान के बाद भी, जीवन में धर्म का कोई अवतरण नहीं हो सका। एक 'फाल्स रिलीजन', एक मिथ्या धर्म, हमारे और धर्म के बीच खड़ा हुआ है। नास्तिक नहीं रोक रहे हैं धर्म को और न वैज्ञानिक रोक रहे हैं और न भौतिकवादी रोक रहे हैं। रोक रहे हैं वे लोग, जिन्होंने धर्मों की ईजाद कर ली है। और तब हम किसी न किसी ईजाद किए हुए धर्म की दीवाल में आबद्ध हो जाते हैं। कारागार में बंद हो जाते हैं। और हमारे चित्त परतंत्र हो जाते हैं और हम उस स्वतंत्रता को खो देते हैं, जो कि सत्य की खोज की पहली शर्त है। ऐसा ईश्वर मर गया है

और मर ही जाना चाहिए। यदि न मरा हो तो जिन लोगों को भी ईश्वर से प्रेम है, उन्हें सहायता करनी चाहिए कि वह मर जाये उसे दफना दिया जाना चाहिए। अगर समय रहते यह न हो सकता तो सच्चे धर्म के अभाव में मनुष्य-जाति का क्या होगा, यह कहना बहुत कठिन है और बहुत दुर्भाग्यपूर्ण भी है। वह घोषणा करनी ही है, वरना उस दिन की कल्पना भी मन को कंपा देने वाली है।

आज भी मनुष्य को क्या हो गया है? आज भी मनुष्य क्या है? अगर पशु-पक्षियों में होश होगा तो वे आदमी को देखकर जरूर हंसते होंगे, उन्हें हंसी आती होगी। डार्विन ने कुछ वर्षों पहले लोगों को समझाया कि मनुष्य जो है, वह बंदर का विकास है। लेकिन एक बंदर ने मुझे बताया कि मनुष्य जो है, वह बंदर का पतन है। डार्विन समझ नहीं पाया। बंदर हंसते हैं आदमी पर और सोचते हैं कि यह उनका पतन है। यह कुछ बन्दर भटक गये हैं और आदमी हो गये हैं। और डार्विन को ख्याल था कि बंदरों का विकास है। यह केवल आदमी के अहंकार की भूल है-एक बन्दर ने मुझे बताया। यह जो आदमी की आज स्थिति है, यह कल और क्या होगी? और कौन इस स्थिति को ऐसा बनाये हुए है?

स्मरण रखिये बीमारियों से ज्यादा घातक वे दवाइयां हो जाती हैं, जो झूठी हैं। स्मरण रखिये, समस्याओं से भी ज्यादा खतरनाक वे समाधान हो जाते हैं जो सच्चे न हों, क्योंकि समस्यायें तो एक तरफ बनी रहती हैं और समाधान दूसरी समस्यायें खड़ी कर देते हैं। इधर पांच हजार बरसों में धर्म के नाम पर जो कुछ हुआ है, उससे जीवन की कोई समस्या हल नहीं हुई, बल्कि और नयी समस्यायें खड़ी कर देता हो तो ऐसे समाधानों से विदा लेने का समय आ गया है, उन्हें विदा दे देनी जरूरी है, क्योंकि बहुत-सी व्यर्थ की समस्याएं उनके कारण हुई हैं और समाधान तो कोई भी नहीं हुआ है। मनुष्य ईश्वर के कितने निकट पहुंचा है? मन्दिर तो बढ़ते जाते हैं, मस्जिदें तो बढ़ती जाती हैं, गिरजे रोज नये-नये खड़े होते जाते हैं और ऐसा मालूम होता है कि अगर यह विकास इसी भांति चला तो आदमी के रहने के लायक मकान न बचेंगे, ईश्वर सब मकान घेर लेगा। लेकिन इन मन्दिरों में, इन गिरजों में, इन मस्जिदों में होता क्या है? क्या मनुष्य के जीवन से ईश्वर का कोई सम्बन्ध वहां पैदा होता है? क्या मनुष्य के जीवन में कोई क्रांति वहां घटित होती है? क्या मनुष्य के जीवन का दुखःदुखद और अंधकार वहां दूर होता है? क्या मनुष्य के जीवन में प्रेम और प्रार्थना के बीज वहां पैदा होते हैं? क्या मनुष्य के जीवन की हिंसा और घृणा वहां समाप्त होती है? क्या कोई सौंदर्य या किसी सौंदर्य के फूल, मनुष्य के हृदय पर वहां पैदा होते हैं, बनते हैं या निर्मित होते हैं? नहीं, बिलकुल नहीं। बल्कि वहां मनुष्य और मनुष्य के बीच घृणा पैदा होती है। क्रोध और हिंसा पैदा होती है। आज तक जितना संघर्ष और रक्तचाप मन्दिरों और मूर्तियों के नाम पर हुआ है और किसी चीज के नाम पर हुआ है? मनुष्य की जितनी हत्या मनुष्यों के द्वारा निर्मित धर्मस्थानों को लेकर हुई है क्या और किसी बात से हुई है? अगर हम सब अब भी इस बात को कहते चले गये कि हम इन्हीं स्थानों को धर्मस्थान मानते रहेंगे तो निश्चित मानिये कि धर्म के अवतरण की फिर कोई संभावना नहीं है।

एक छोटी-सी कहानी मुझे स्मरण आती है, वह मैं आपसे कहूं।

एक चर्च के द्वार पर सुबह-सुबह एक आदमी ने आकर दस्तक लगायी। मैं तो उसे आदमी कह रहा हूं, लेकिन चर्च में जो लोग रहते थे, वे उसे आदमी नहीं समझते थे, क्योंकि मंदिरों ने आदमी और आदमी में फर्क पैदा कर रखा है। वह आदमी काले रंग का था और जिनका मंदिर था और जिनका परमात्मा था, वे सफेद रंग के लोग थे। उस मंदिर के पुरोहित ने उस काले आदमी से कहा—तुम यहां कैसे आये? उसने कहा—मैं परमात्मा की खोज में आया हूं। पुरोहित ने उसे नीचे से ऊपर तक देखा। काला आदमी है और सफेद आदमी के मन्दिर में आये? वह समझ में आने वाली बात नहीं थी। यदि पुराने दिन होते तो उसने तलवार निकाल ली होती और उससे कहा होता—यहां से हट जाओ। तुम्हारी छाया पड़नी भी खतरनाक है। लेकिन दिन बदल गये, भाषायें बदल गइ। उस पुरोहित ने बहुत प्रेम से कहा—मेरे भाई! मन्दिर में आने से क्या होगा? तब तक तुम्हारा हृदय शांत न हो और तुम्हारा मन विकारों से मुक्त न हो, तब तक मन्दिर में आकर क्या करोगे? परमात्मा तो केवल उन्हें मिलता है, जिनके हृदय शान्त होते हैं और जो विकार से मुक्त होते हैं। तो तुम जाओ, पहले हृदय को पवित्र करो और फिर आना। उस पुरोहित ने सोचा होगा कि न होगा हृदय पवित्र और न यह वापस आयेगा। लेकिन यह बात उसने सफेद चमड़ी के लोगों से कभी भी नहीं कही थी। यह तो उस आदमी को उस मन्दिर से

दूर रखने का उपाय था। वह काला आदमी चला गया। कई महीने बाद रास्ते के चौराहे पर, वह उस पुरोहित को दिखाई पड़ा। वह बहुत मगन और बहुत आनंदित था और उसकी आंखों में रोशनी झलकती थी। उस पुरोहित ने पूछा—तुम दोबारा नहीं आये? उसने कहा—मैं क्या करूं? मैंने मन को पवित्र करने की कोशिश की, मुझसे जो बन पड़ता था, वह मैंने किया। मैं शान्त हुआ और मैंने एकांत खोजा और एक रात परमात्मा ने मुझे स्वप्न में दर्शन दिये और उसने कहा कि तू किसलिए पवित्र होने की कोशिश करता है? मैंने उससे कहा—वह जो मंदिर है हमारे गांव में, वह जो चर्च है, मैं उसमें प्रवेश करना चाहता हूं और उसके पुरोहित ने कहा है कि पहले पवित्र हो जाओ, तब आने के लिए द्वार खुलेगा। परमात्मा यह सुनकर हंसने लगा और उसने कहा कि तू बिलकुल पागल है। कोशिश करना छोड़ दे। दस साल से मैं खुद ही उस चर्च में घुसने की कोशिश कर रहा हूं। पुजारी मुझे ही नहीं घुसने देता। मैं खुद ही सफल नहीं हो सका और निराश हो गया, तू भी वहां प्रवेश नहीं पा सकेगा।

और यह बात एक मन्दिर की बाबत नहीं, सभी मन्दिरों की बाबत है। और यह बात एक पुजारी के सम्बन्ध में नहीं, सभी पुजारियों के सम्बन्ध में है। जहां भी मन्दिर हैं और जहां भी पुजारी हैं, वहां उन्होंने परमात्मा को कभी प्रवेश नहीं पाने दिया और न वे पाने देंगे, क्योंकि पुजारी व्यवसाय है। प्रेम और व्यवसाय का क्या सम्बन्ध? जहां पुजारी है, वहां दुकान है, वहां मंदिर कैसे हो सकता है? लेकिन अपनी उन दुकानों को, उन्होंने मंदिर बना रखा है और उन दुकानों के ग्राहकों को, दूसरी दुकानों के खिलाफ, बहुत घृणा से भर रखा है, ताकि वे उनकी दुकानों को छोड़कर, दूसरी दुकानों पर न चले जाएं। एक मंदिर दूसरे मंदिर के विरोध में और एक मंदिर का परमात्मा दूसरे मंदिर के परमात्मा के विरोध में है। क्या यही धर्म की स्थिति है? और क्या इसके द्वारा धर्म को गति मिली है, प्राण मिले हैं? धर्म निष्प्राण हुआ है। इस भांति का ईश्वर मर गया हो, इससे ज्यादा सुखद समाचार दूसरा और नहीं हो सकता। लेकिन अगर वह मर भी गया हो तो पुजारी इसकी खबर आपको पता नहीं चलने देंगे, क्योंकि आपको यह पता चल जाना बहुत खतरनाक होगा। इसलिए वह उस मरे हुए ईश्वर के आस-पास भी मंत्र पढ़ते रहेंगे और पूजा करते रहेंगे। इसलिए नहीं कि परमात्मा से उन्हें बहुत प्रेम है, बल्कि इसलिए कि उनके जीवन का आधार वे ही पूजाएं हैं। वे इसी से जीते हैं। यही उनकी आजीविका है।

जिन लोगों ने परमात्मा को आजीविका बनाया, उन लोगों ने ही मनुष्य को परमात्मा से दूर करने के उपाय किये। तो जहां भी परमात्मा जीविका बन गया हो, जान लेना कि वहां परमात्मा नहीं हो सकता। परमात्मा प्रेम है और प्रेम का व्यवसाय नहीं हो सकता। उसकी आजीविका नहीं हो सकती। प्रार्थनाएं बेची नहीं जा सकतीं और प्रार्थनाएं दूसरों के लिए की भी नहीं जा सकतीं। प्रेम में कोई मध्यस्थ नहीं होता है और न कोई दलाल होता है। जहां दलाल हों और मध्यस्थ हों, वहां प्रेम असंभव है। वहां तो सौदा होगा, 'बार्गेन' होगा, प्रेम नहीं हो सकता। प्रेम सीधा होता है। प्रेम के बीच कोई मौजूद नहीं होता। परमात्मा और मनुष्य के बीच में जिस दिन से पुजारी मौजूद हुआ, उसी दिन से सारी बात खराब हो गई है। ऐसा परमात्मा मर जाये, इससे ज्यादा शुभ कुछ भी नहीं है, क्योंकि ऐसा परमात्मा जिंदा ही नहीं है। इसकी मृत्यु से, उस परमात्मा के जीवन की तरफ हमारी आंखें उठनी शुरू होंगी जो कि वस्तुतः: जीवन है, महान जीवन है, परम जीवन है। हिंदू, मुसलमान, ईसाई, जैन और बौद्ध और इसी तरह के सभी नाम, दुनिया से विदा होने चाहिए, तभी दुनिया में धर्म का जन्म हो सकता है। इसी भांति शास्त्रों, शब्दों और सिद्धांतों का ईश्वर नहीं है। शब्द, शास्त्र और सिद्धांत मनुष्य के चित्त और बुद्धि के अनुमानों से ज्यादा नहीं है। वे अंधेरे में फेंके गये उन तीरों की भांति हैं, जो लग भी जाता हो तो भी उनके लगने का कोई अर्थ नहीं होता। उनका लग जाना तो संयोग है।

मनुष्य सोचता रहा जीवन में जहां-जहां अज्ञान और अंधेरा है। मनुष्य विचार करता रहा, अनुमान करता रहा। अनुमानों के बहुत शास्त्र, सारी जमीन पर इकट्ठे हो गये। इन अनुमानों में, इन कल्पनाओं में, इन धारणाओं में कोई सत्य नहीं है। इनमें कोई ईश्वर नहीं है, क्योंकि ईश्वर का अनुभव तो वहां शुरू होता है, जहां सब अनुमान, सब विचार, सब धारणायें शांत हो जाते हैं। जहां चित्त, मौन और निर्विचार को उपलब्ध होगा, वहीं उस सत्य को जानने में समर्थ होता है। जहां सारे शास्त्र शून्य हो जाते हैं, वहीं उसका उदघाटन होता है जो सत्य है।

इसलिए शब्दों में जो भटके हों, शब्दों को जिन्होंने पकड़ रखा हो, शास्त्रों को जिन्होंने अपनी आत्मा समझ रखा हो, उनका

सत्य से कोई मतलब नहीं हो सकेगा। अनुमान करने में मनुष्य की बुद्धि प्रखर है, तीव्र है और अनुमान के द्वारा अपने अज्ञान को ढंक लेने में भी हम बहुत होशियार हैं।

जहां-जहां अज्ञान है, वहां-वहां हम कोई अनुमान कर लेते हैं, कोई कल्पना कर लेते हैं। धीरे-धीरे उस कल्पना पर विश्वास करने लगते हैं। क्यों? क्योंकि उस कल्पना पर विश्वास करने से हमारे अज्ञान का बोध नष्ट हो जाता है। हमें लगता है कि हम जानते हैं। जिस मनुष्य को यह लगता हो कि मैं जानता हूं ईश्वर को, वह ईश्वर को कभी नहीं जान सकेगा, क्योंकि उसका जानना निश्चित ही कहीं शास्त्रों और सिद्धांतों की पकड़ पर निर्भर होगा। कुछ उसने सीख लिया होगा, कुछ उसने समझ लिया होगा, कुछ उसने स्मरण कर लिया होगा, वही उसका ज्ञान बन गया होगा। ऐसा ज्ञान नहीं, बल्कि ऐसा 'अज्ञान' कि मैं जीवन-सत्य के संबंध में कुछ भी नहीं जानता हूं। इस बात का बोध कि मुझे जीवन-सत्य के संबंध में कुछ भी पता नहीं, कुछ भी ज्ञान नहीं, ऐसी 'इग्नोरेंस' का स्पष्ट अहसास, ऐसी प्रतीति कि मुझे पता नहीं, मनुष्य के चित्त को शब्दों के भार से मुक्त कर देगी और वह 'मौन' पैदा होगा,जो उसे जानने की तरफ ले जाता है।

किसी ने यह घोषणा कर दी एथेंस में कि सुकरात सबसे बड़ा ज्ञानी है। लोग सुकरात के पास गये और उन्होंने सुकरात से कहा—लोगों ने घोषणा की है कि तुम सबसे बड़े ज्ञानी हो। सुकरात हंसा और उसने कहा—जाओ, उनसे कहना कि जब मैं युवा था तो मुझे भी ऐसा भ्रम था कि मैं ज्ञानी हूं। फिर जैसे-जैसे मेरी उम्र बढ़ी, मेरा ज्ञान बिखरता गया और पिघलता गया और बह गया। और अब जबकि मैं मौत के करीब आ गया हूं और जब मुझे किसी से कोई डर नहीं है, मैं एक सच्ची बात कह देना चाहता हूं कि मैं कुछ भी नहीं जानता और उन लोगों से कह दो कि सुकरात तो कहता है कि वह महाअज्ञानी है।

वे लोग गये और उन्होंने जाकर, जो लोग इसकी घोषणा गांव में करते फिरते थे, उनसे कहा कि सुकरात कहता है कि वह महाअज्ञानी है।

उन्होंने कहा—इसीलिये तो हम कहेंगे कि उसे परम ज्ञान उपलब्ध हुआ है, क्योंकि वह यह कहने में समर्थ हो गया और जो इस प्रकार जानने में समर्थ हो गया है कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं वही परम ज्ञानी है। इस शांत , मौन, इनोसेंट निर्दोष स्थिति में ही जानने के द्वार खुल सकते हैं। जिसको यह खयाल हो कि मैंने जान लिया है, उसका तो अहंकार और मजबूत हो जायेगा। ज्ञानियों के अहंकार से ज्यादा बड़ा अहंकार और किसी का नहीं होता है। उनकी तो 'ईगो', उनका तो 'मैं' का भाव कि 'मैं' कुछ हूं' और भी प्रबल हो जायेगा। जिसको यह वहम हो जाए कि मैं कुछ हूं वह परमात्मा से नहीं मिल सकेगा, क्योंकि परमात्मा से मिलने की पहली शर्त यह है—जैसे बूंद अपने को सागर में खो देती है, ऐसे ही कोई अपने अहंकार को सर्व के साथ निमज्जित कर दे, सर्व के साथ खो दे। वह जो चारों तरफ फैला विस्तार है, वह जो असीम और अनंत सत्ता है चारों ओर, उसमें अपने को डुबा देगा और खो देगा।

सुकरात ने कहा था कि मैं महान अज्ञानी हूं। क्या आप भी किसी क्षण में इस बात को अनुभव कर पाते हैं कि आप महानअज्ञानी हैं? अगर कर पाते हैं तो कहीं न कहीं परमात्मा वह क्षण निकट लायेगा, जब ज्ञान का जन्म हो सकता है। लेकिन यदि आप भी अपने मन में यह दोहराते हैं कि मैं जानता हूं तो स्मरण रखना, यह जानने का भ्रम कभी भी नहीं जानने देगा।

ज्ञानियों का ईश्वर मर गया। उनका ईश्वर, जिनको यह खयाल है कि हम जानते हैं। पंडितों का ईश्वर मर गया है। अब तो उन लोगों के ईश्वर के लिए जगत में जगह होगी, जिनके हृदय बच्चों की तरह सरल हों और वह यह कह सकें कि हम नहीं जानते और उस न जानने के बिन्दु से जिनकी खोज शुरू हो सके, जो न जानने के स्थान की खोज कर सकें और यात्रा कर सकें। सच तो यह है कि कोई भी 'इंक्वायरी', खोज तभी प्रारंभ होती है, जब न जानने का भाव गहरा और प्रबल हो जाए। जब जानने का भाव गहरा हो जाता है तो खोज बंद हो जाती है, टूट जाती है, समाप्त हो जाती है।

लेकिन हम सभी कुछ न कुछ जानने के खयाल में हैं, अगर हमने गीता स्मरण कर ली है या कुरान या बाइबिल या कोई और शास्त्र और अगर हमें वे शब्द पूरी तरह कंठस्थ हो गये हैं और जीवन जब भी कोई समस्यायें खड़ी करता है तो हम उन सूत्रों को दोहराने में सक्षम हो गये हैं और अगर हमें इस भांति ज्ञान पैदा हो गया है तो हम बहुत दुर्दिन की स्थिति में हैं,

बहुत दुर्भाग्य है। यह ज्ञान खतरनाक है। यह ज्ञान कभी सत्य को नहीं जानने देगा और कभी ईश्वर को भी नहीं जानने देगा। ईश्वर से यह ज्ञान कभी संबंधित नहीं होने देगा। यह ज्ञान जो शब्दों से और शास्त्रों से आता है, ज्ञान ही नहीं है। यह अज्ञान को छिपा लेने के उपाय से ज्यादा कुछ नहीं है। हां, यह हो सकता है कि इस अज्ञान में भी कभी-कभी कोई तीर लग जाता हो, कहीं छोटी जगह। यह हो सकता है। कभी-कभी पागल भी ठीक उत्तर दे देते हैं। और कभी-कभी तो अनुमान से भी अंधेरे में सच्चाइयां साबित हो जाती हैं। लेकिन उन पर कोई जीवन खड़ा नहीं हो सकता है।

मैंने सुना है कि एक गांव में एक स्कूल के निरीक्षण के लिए एक इंसपेक्टर आया। खबर उसके पहले ही उस गांव में आ गयी थी कि उस इंस्पेक्टर का दिमाग खराब हो गया है। लेकिन सरकारी काम होते हैं, यह खबर मिल जाने पर भी कि उसका दिमाग खराब हो गया है, अभी उसकी चिकित्सा की व्यवस्था होने में काफी देर थी या उसे नौकरी से निवृत्त करने में काफी देर थी। वह पागल हो गया था, लेकिन अपने काम को जारी रखे हुए था, बल्कि और भी मुस्तैदी से। पागल काम करने में बड़े कर्मठ हो जाते हैं। वे जो भी करते हैं पूरी ताकत से करते हैं। वह इंस्पेक्टर भी अधिक जोर से निरीक्षण करने लगा। अब वह बैठता नहीं था घर पर। वह गांव-गांव निरीक्षण करता फिरता और स्कूल के रजिस्टर में उस स्कूल का रेकार्ड खराब करता था, क्योंकि उसके प्रश्नों के उत्तर देना बिलकुल असंभव था।

वह उस गांव में भी आया, जिसकी मैं बात कर रहा हूं—बच्चे डरे हुए थे कि क्या होगा। वह आया और सबसे बड़ी जो कक्षा थी उस स्कूल की, उसमें जाकर उसने कुछ प्रश्न पूछे। सबसे पहले उसने यह कहा—जो प्रश्न मैं पूछ रहा हूं, इसका कोई भी अब तक उत्तर नहीं दे पाया है। अगर तुम बच्चों में से किसी ने भी इसका उत्तर दे दिया तो फिर मैं दूसरा प्रश्न नहीं पूछूंगा, क्योंकि परखने को एक चावल ही काफी होता है। उसी से बाकी चावलों के पका होने का पता चल जाता है। अगर तुम इसका उत्तर नहीं दे सके तो मैं और भी प्रश्न पूछूंगा, लेकिन वे इससे ज्यादा कठिन हैं। उसने प्रश्न पूछा। उसने पूछा, दिल्ली से एक हवाई जहाज कलकत्ता की तरफ उड़ा। वह घण्टे भर में दौ सौ मील चलता है तो क्या तुम हिसाब लगा कर बता सकते हो कि मेरी उम्र क्या है?

सारे बच्चे घबड़ा गये। बच्चे क्या, बूढ़े होते तो वे भी घबरा जाते। इससे कोई संबंध नहीं था। प्रश्न बिलकुल असंगत था। उसमें कोई संबंध ही नहीं था। दिल्ली से हवाई जहाज जाए कलकत्ता, किसी भी रफ्तार से जाए, उससे क्या संबंध था उसकी उम्र का? लेकिन और बड़ी हैरानी की बात थी कि एक बच्चे ने हाथ हिलाया उत्तर देने के लिए। तब तो अध्यापक और प्रधानाध्यापक सभी हैरान हो गए। उसका प्रश्न तो पागलपन का था, लेकिन एक बच्चा उत्तर देने को भी राजी है। जब उसने हाथ हिलाया था, तब इंस्पेक्टर बहुत खुश हुआ था। उसने कहा—यह पहला मौका है कि ऐसा बुद्धिमान बच्चा मुझे मिला, जिसने हाथ हिलाया उत्तर देने के लिए। तुम खड़े हो जाओ और उत्तर दो।

उस बच्चे ने कहा—यह उत्तर मैं ही दे सकता हूं और सारी जमीन पर घूम लेते तो भी यह उत्तर नहीं मिलता। जैसे आपका प्रश्न आप ही कर सकते हैं। यह उत्तर भी सिर्फ मैं ही दे सकता हूं।

इंस्पेक्टर ने कहा—कितनी है उम्र मेरी?

उस लड़के ने कहा, आपकी उम्र ४४ वर्ष है। इंस्पेक्टर यह सुनकर हैरान हो गया। उसकी उम्र ४४ वर्ष ही थी। उसने कहा—किस विधि से तुमने यह गणित हल किया?

उसने कहा—बहुत आसान है। मेरा बड़ा भाई आधा पागल है और उसकी उम्र बाइस वर्ष की है तो बिलकुल आसान सवाल है। आपकी उम्र ४४ वर्ष होनी चाहिए।

यह ईश्वर के सम्बन्ध में, आत्माओं के सम्बन्ध में, परलोक, स्वर्ग और नरक और मोक्ष के सम्बन्ध में जो प्रश्न पूछे गये हैं, वह इस पागल के प्रश्न से भी ज्यादा असंगत हैं। और इनके उत्तर देने वाले भी मिल गये। यह कितनी असंगत बात है कि हम पूछें ईश्वर कैसा है? कहां है? कहां रहता है? हम, जिन्हें अपना ही पता नहीं, हम ईश्वर के सम्बन्ध में यह प्रश्न पूछें! हम जिन्हें यह भी पता नहीं कि हम कहां हैं, कौन हैं, क्या हैं, हम यह पूछें कि ईश्वर क्या है, कैसा है, बिलकुल असंगत है।

लेकिन हमारे प्रश्न चाहे असंगत हों, इनके उत्तर देने वाले लोग भी मौजूद हैं, जो बताते हैं कि ईश्वर कहां है। उन्होंने नक्शे

भी बनाये हैं और उन्होंने किताबें भी छापी हैं और उसमें उसका सब पता-ठिकाना दिया हुआ है। पुराने जमाने में फोन नंबर नहीं होते थे, इसलिए उन्होंने फोन नंबर नहीं लिखा भगवान का। अगर वे फिर से नये संस्करण निकालेंगे अपनी किताबों के तो उसमें फोन नंबर भी होगा। और फिर वहां जाने की जरूरत नहीं है, आप घर से ही बात कर लेंगे। उन्होंने फासला तक बताया है। स्वर्ग के रास्ते और नरक के रास्ते बनाये हैं और नक्शे बनाये हैं और मंदिरों में वे नक्शे टंगे हुए हैं। और इन सारी बातों पर नक्शा बनाने वालों में विरोध है, होना स्वाभाविक भी है, क्योंकि यह तय करना कठिन है कि किसका नक्शा ठीक है।

अगर इन संबंधों में कि ईश्वर की शक्ल कैसी है, स्वभावतः चीनी में और भारतीय में झगड़ा होना स्वाभाविक है, क्योंकि चीनी जो शक्ल बनायेगा, वह चीन के आदमी जैसी होगी और नीग्रो जो शक्ल बनायेगा, उसमें वह पतला होठ नहीं लगा सकता। उसके बाल घुंघराले होंगे, शक्ल काली होगी और होंठ ऐसे होंगे जैसे नीग्रो के होते हैं। तो झगड़ा होना स्वाभाविक है कि ईश्वर के होंठ कैसे हैं। तो भारतीयों का उत्तर दूसरा होगा, नीग्रो का उत्तर दूसरा और चीनी का उत्तर दूसरा। यह बिलकुल स्वाभाविक है। इन झगड़ों को तय करने का रास्ता फिर एक ही रह जाता है कि कौन कितनी जोर से तलवार चला सकता है और कितने जोर से लोगों को मार सकता है और मारने में जीत सकता है, उसका उत्तर सही है। तो उस स्कूल के इंस्पेक्टर पर मत हंसिए। सारी दुनिया के इतिहास पर हंसिए, पंडितों पर हंसिए, उत्तर के सही होने का सबूत क्या है? सबूत यह है कि हम सात करोड़ हैं, तुम बीस करोड़ हो। सबूत यह है कि अगर तुम लड़ोगे तो हम तुम्हारी हत्या कर देंगे। तुम हमारी हत्या नहीं कर पाओगे। इसलिए हम सही हैं। इसलिए तो सारी दुनिया के धर्म अपनी-अपनी संख्या बढ़ाने के लिए पागल हैं, क्योंकि संख्या बल है और सत्य की गवाही में संख्या के सिवाय और कौन सा बल है? यह सारी दुनिया के धर्म व पुरोहित, राजाओं को दीक्षित करने के लिए दीवाने और पागल हो रहे हैं वह इसलिए कि राजा के पास बल है और जो राजा जिस धर्म में दीक्षित हो जायेगा, वह धर्म सत्य हो जायेगा।

लड़कर जो लोग यह तय करना चाहते हों कि कुरान सही है कि बाइबिल कि गीता, उनसे ज्यादा पागल और कौन होगा? लड़कर जो यह सिद्ध करना चाहते हों कि कौन सही है। लड़ाई क्या किसी बात की सचाई का सबूत है या कि जीत जाना कोई सचाई का सबूत है?

लेकिन इन उत्तरों का भिन्न होना स्वाभाविक है, क्योंकि वह मनुष्य की कल्पना से निकले हैं और मनुष्य के अपने अनुभव से निकले हैं।

अगर आप तिब्बतियों से पूछें कि नरक में क्या है तो वे कहेंगे कि नरक बहुत ठंडा है, बहुत शीत है वहां, क्योंकि तिब्बत ठंड से परेशान है, शीत से परेशान है। तो जो-जो तिब्बत में पाप करते हैं, उनको और भी ठंडी जगह में भेजना स्वाभाविक है। यह बिलकुल अनुभव की बात है कि उनको और ठंडी जगह में भेज दो, जो पाप करते हैं।

लेकिन भारतीयों से पूछिये कि तुम्हारा नरक कैसा है तो वहां पर आग की लपटें जल रही हैं, कड़ाहे जल रहे हैं और उन जलते हुए कड़ाहों में लोगों को डाला जा रहा है,

क्योंकि हम गरमी से परेशान हैं, सूरज तप रहा है तो हमारा नरक भी गरम होगा, यह बिलकुल स्वाभाविक है। यह हमारा अनुमान बिलकुल स्वाभाविक है। हम अपने पापी को ठंडी जगह नहीं भेज सकते हैं, ठंडी जगह तो हम अपने मिनिस्टरों को भेजते हैं। ठंडी जगह तो हम अपनी राजधानियां बदलते हैं। पापियों को ठण्डी जगह भेजेंगे तब तो बड़ी गड़बड़ी हो जायेगी। पापियों को हम गरम जगह भेजेंगे। यह हमारी कामना गरम जगह भेजने की, उनको सताने की, हमारे नरक का निर्माण बन जाती है। हमारा नरक गरम हो जाता है। यह हमारा अनुमान है। इस अनुमान से न नरक के होने का पता चलता है, न इस बात का कि वह गरम है या ठंडा है या वह है भी या नहीं। इससे केवल एक बात का पता चलता है कि किस कौम ने और किस तरह के लोगों ने यह कल्पना की है। हमारे शास्त्र यह नहीं बताते कि सत्य कैसा है, हमारे शास्त्र तो यह बताते हैं कि उनको बनाने वाले लोग कैसे हैं। हमारी कल्पनाओं और सत्य के सम्बन्ध में वे नहीं बताते कि सत्य कैसा है। वे यह बताते हैं कि इसकी कल्पना करने वाले लोग किस स्थिति में हैं, किस मनोदशा में हैं वे लोग, उनकी सूचना मिलती है। और फिर हम इन पर लड़ाइयां लड़ते हैं, इन अनुमानों पर। इन अनुमानों और इन शास्त्रों पर सारी

क्या ईश्वर मर गया है?

दुनिया विभाजित होकर खड़ी है और इन हवाई बातों पर हम एक दूसरे की हत्या करते रहे हैं। हम लोगों को समझाते रहे हैं कि तुम मरो, फिक्र मत करो। जो धर्म के लिए मरता है, वह स्वर्ग जाता है! और तब ऐसे नासमझ खोज लेने कठिन नहीं हैं, जो कि स्वर्ग जाने की उत्सुकता में जमीन को बर्बाद करने के लिए राजी हो जायेंगे और ऐसे पागल जमीन पर काफी हैं, जिन्हें शहीद होने में बहुत मजा आता है।

यह सारा हमारा इतिहास, ऐसे झूठे ईश्वरों के आस-पास, उन्हीं के इर्द-गिर्द हुआ है। शब्दों के आस-पास, अनुमानों के आस-पास, सत्य के निकट नहीं है। सत्य के निकट कोई संगठन खड़ा नहीं हो सकता। संगठन हमेशा झूठ के करीब ही खड़े हो सकते हैं।

सत्य के इर्द-गिर्द कोई संगठन, कोई आर्गनाइजेशन खड़ा नहीं हो सकता। नहीं हो सकता इसलिए कि सत्य का अनुभव अत्यंत वैयक्तिक है। समूह से उसका कोई संबंध नहीं है। दस आदमी इकट्ठे बैठकर सत्य का अनुभव नहीं कर सकते, भीड़ से उसका कोई वास्ता नहीं है। एक व्यक्ति अपने एकांत में, तनहाई में, अकेलेपन में अपने भीतर डूबता है, शांत होता है, मौन होता है और उसे जानता है। व्यक्ति और व्यक्तित्व ही केवल सत्य को जानते हैं, समूह और समाज नहीं। इकट्ठे होकर संगठन बनाया जा सकता है। लेकिन इकट्ठे होकर धर्म को नहीं पाया जा सकता है।

संगठनों का ईश्वर मर गया है, उसे मर जाना चाहिए। लेकिन धर्म का ईश्वर? वह बात ही और है। वही अकेला जीवन है। उसके अतिरिक्त तो सब मृत्यु है, उसके अतिरिक्त तो कुछ है ही नहीं। उसको जानने के लिये संगठन में नहीं, साधना में जानना जरूरी है। साधना अकेले की बात है। संगठन, भीड़ और समूह की। हम सारे लोग अब तक धर्म को समूह और संगठन की बात समझते रहते हैं। हम समझते हैं कि हिंदू हो जाना धार्मिक हो जाना है। मुसलमान हो जाना, पारसी हो जाना धार्मिक हो जाना है। कैसी पागलपन की बातें हैं! किसी एक संगठन का हिस्सा हो जाने से कोई धार्मिक होता है? धार्मिक होने का अर्थ ही कुछ उलटा है इससे। संगठन का हिस्सा हो तो कोई धार्मिक नहीं होता। इन संगठनों से जो मुक्त हो जाता है, वह धार्मिक हो जाता है। समाज का हिस्सा होकर तो कुछ भी नहीं होता। लेकिन अपने चित्त में जो समाज से पूर्णतया परिपूर्ण हो जाता है, वह धर्म से दूर हो जाता है। समाज और संगठन में तो हम किन्हीं और कारणों से इकट्ठे होते हैं। किसी भय के कारण, किसी सुरक्षा के लिए, किसी घृणा के लिए, किसी से लड़ने के लिए इकट्ठा होते हैं। इस भय के कारण कि मैं अकेला बहुत कमजोर हूं। मैं दस के साथ हो जाऊं।

एक फकीर को, मंसूर को फांसी लगाई जा रही थी। लोग उसके हाथ काट रहे थे। लाखों लोग इकट्ठे हो रहे थे और उस पर पत्थर फेंक रहे थे। और वे वह व्यवहार कर रहे थे, जो ईश्वर के आदमी के साथ हमेशा तथाकथित धार्मिक लोग करते हैं। उसकी आंखें फोड़ डालीं, उसके पैर काट डाले और उस पर पत्थर फेंके जा रहे थे। लेकिन वह फकीर मुस्करा रहा था और वह परमात्मा से प्रार्थना कर रहा था। तभी एक फकीर ने भी, जो उस भीड़ में खड़ा था, एक मिट्टी का ढेला उठा कर उसकी तरफ फेंका। मंसूर अब तक मुस्करा रहा था। उसकी आंखें फोड़ दी गई थीं, उनसे खून बह रहा था। उसके पैर काट दिये गये थे। वह मरने के करीब था। उस पर पत्थर मारे जा रहे थे, जो उसके शरीर को क्षत-विक्षत कर रहे थे, लेकिन वह हंस रहा था और उसकी आंखों में, उसके होंठों पर, उसके हृदय में, इस सारी पीड़ा और दुख के बीच भी प्रेम था।

लेकिन मिट्टी का एक ढेला एक फकीर ने फेंका, जो भीड़ में खड़ा था तो मंसूर रोने लगा। लोग बड़े हैरान हुए। एक आदमी ने पूछा—तुम्हें इतना सताया गया, तुम नहीं रोये और मिट्टी के एक छोटे-से ढेले के फेंकने से तुम रो पड़े? उसने कहा—और सबको तो मैं सोचता था कि नासमझ हैं, इसलिए परमात्मा से उनके लिए प्रार्थना करता था, इसलिए मुझे कोई दुःख नहीं था। लेकिन वह आदमी जो खड़ा है, वह जो फकीर है , वह जो वस्त्र पहने हुए है परमात्मा के, उसने भी मुझे पत्थर मारा तो मुझे हैरानी हुई। मेरी आंखों में आंसू आ गये। जब फकीर ही पत्थर मारेगा तो दुनिया का क्या होगा? लेकिन फकीर को बहुत दिनों से पत्थर मारे जा रहे हैं और इसलिए दुनिया का यह हाल हो गया है। भीड़ बिखर गई और वह आदमी मंसूर तो मर गया और सुवास तो उड़ गई। उस फकीर से कुछ दूसरे फकीरों ने पूछा कि तुमने पत्थर क्यों मारा तो उसने कहा—भीड़ का साथ देने के लिए। अगर मैं भीड़ का साथ नहीं देता तो लोग समझते कि पता नहीं यह भी मंसूर

को पसंद करता है। उन फकीरों ने कहा—पागल! अगर साथ ही देना था तो उसका देना था, जो अकेला था। साथ भी दिया तो उनका जो बहुत थे? उन फकीरों ने उससे फिर कहा—फकीरी के कपड़े छोड़ दे, क्योंकि जो भीड़ से डरता है, वह धार्मिक नहीं हो सकता।

जो भीड़ से डरता है, वह कभी धार्मिक नहीं होता। अगर भीड़ ही धार्मिक होती तो दुनिया में अधर्म कैसे होते? अगर धार्मिक होती तो फिर अधर्म और कहां होता? भीड़ तो अधार्मिक है। इसलिए जो भीड़ से भयभीत है, वह भीड़ का अंग बना रहता है। वह कभी भी धार्मिक नहीं हो पायेगा। मन को भीड़ से मुक्त होना चाहिए। इसका यह मतलब नहीं कि मैं आपसे यह कह रहा हूं कि आप भीड़ को छोड़ दें और जंगल में चले जाएं। जमीन बहुत छोटी है, अगर सारे लोग जंगलों में चले गये तो वहां बस्तियां बस जाएंगी। उससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा। यह मैं नहीं कह रहा हूं कि आप गांव छोड़ दें और जंगलों में चले जाएं। कुछ लोगों ने यह गलती भी की है। जब उनसे यह कहा जाता है कि तुम भीड़ से मुक्त हो जाओ तो वे भीड़ छोड़कर भागने लगते हैं।

भागने वाला कभी मुक्त नहीं होता। भागने वाला भी डरने वाला है।

अगर मुक्त होना है तो बीच में रहो और मुक्त हो जाओ। वह तो अभय को, फियरलेसनेस का सबूत होगा। दो तरह के लोग हैं। भीड़ में रहते हैं तो भीड़ से डरकर और दबकर रहते हैं। इन्हीं डरे हुए लोगों को जब कभी यह खयाल पैदा होता है कि मुक्त हो जाएं तो यह जंगल की तरफ भागते हैं, क्योंकि वहां भीड़ ही नहीं रहेगी तो डराएगा कौन? सवाल यह नहीं है कि डराने वाला न हो। सवाल यह है कि आप डरने वाले न रहें। इसलिए जंगल जाने से कुछ भी नहीं होगा। जो जंगल भागते हैं, वे भयभीत हैं। वे डरे हुए लोग हैं।

जिंदगी से भागने वाला धर्म, सच्चा धर्म नहीं हो सकता।

जिंदगी के बीच, जहां जीवन चारों तरफ है, वहीं मुक्त हुआ जा सकता है।

मुक्त होने का मतलब कोई शारीरिक और बाह्मय मुक्ति नहीं है। मुक्त होने का मतलब है मानसिक स्वतंत्रता। मुक्त होने का मतलब है मानसिक गुलामी को तोड़ देना। मुक्त होने का मतलब है भीड़ ने जो विश्वास दिये हैं, 'बिलीफ' दिये हैं, उनसे छूट जाना। भीड़ ने जो बातें पकड़ा दी हैं—हिंदू होना, मुसलमान होना, इस मंदिर को पवित्र मानना, उस मंदिर को पवित्र नहीं मानना, ये जो बातें पकड़ा दी हैं, ये जो शब्द पकड़ा दिये हैं, ये जो सिद्धांत पकड़ा दिये हैं, इनसे मुक्त हो जाना और मन की उस स्वतंत्रता को पाकर सत्य की निजी वैयक्तिक खोज शुरू करना।

जो व्यक्ति दूसरे के उधार सत्यों को स्वीकार करके चुप हो जाता है, उस आदमी की खोज सत्य के लिए नहीं, क्योंकि सत्य कभी उधार नहीं हो सकता है, वह 'बारोड' कभी नहीं हो सकता है। जो भी चीज उधार ली जा सकती है, वह संसार की होगी। और जो चीज कभी उधार नहीं पाई जा सकती, वही केवल परमात्मा की हो सकती है। परमात्मा को उधार नहीं लिया जा सकता। परमात्मा कोई ऐसी चीज नहीं है, कि ट्रांसफरेबल हो कि मैंने आपको दे दिया और आपने किसी और को दे दिया। जीवन में जो भी श्रेष्ठ है, जो भी सत्य है, जीवन में जो भी सुंदर है, जीवन में जो भी शिव है, वह कुछ भी एक हाथ से दूसरे हाथ में नहीं दिया जा सकता है। उसे तो सीधे स्वयं की अपनी खोज, अपने प्राणों के आंदोलन, अपने हृदय की प्रार्थनाएं, अपने जीवन के प्रयास से ही पाना होता है। वह एक निजी और वैयक्तिक खोज है।

समूह का ईश्वर मर गया है, मर जाने दें। सहारा दें कि वह मर ही जाए व्यक्ति का, एक-एक इकाई का, एक मनुष्य का ईश्वर ही सच्चा ईश्वर हो सकता है। संगठन का ईश्वर चला गया है तो जाने दें। उसे रोकें नहीं, न घबरायें कि उसके जाने से दुनिया का धर्म चला जाएगा। उसके होने की वजह से ही दुनिया में धर्म नहीं आ सकता है। उसे जाने ही दें।

उस ईश्वर की आकांक्षा करें, उस ईश्वर की अभीप्सा करें, उस ईश्वर के लिए प्रार्थना और प्रेम से भरें, जो व्यक्ति का है, इकाई का है, समूह का और संगठन का नहीं है। मर जाने दें हिंदू को, मुसलमान को। मर जाने दें बौद्ध को, विदा हो जाने दो दुनिया से। कोई जरूरत नहीं है। एक-एक व्यक्ति के ईश्वर को, एक-एक व्यक्ति के धर्म को जन्म देना है। समूह के ईश्वर में बड़ी सुविधा है। आपको बिना खोजे धार्मिक हो जाने का मजा आ जाता है। बिना जाने, जानने का सुख मिल जाता है। बिना धार्मिक हुए, धार्मिक होने का अहंकार दृढ़ हो जाता है।

रोज सुबह उठकर किसी मंदिर में हो आते हैं और अकड़ से चलते हैं कि मैं धार्मिक हूं। रोज सुबह किसी किताब को उठाकर पढ़ लेते हैं और जानते हैं कि मैं धार्मिक हूं। अगर रोज सुबह उठकर, किसी किताब को पढ़ने वाले लोग धार्मिक हैं, अगर ये रोज मंदिर में जाने वाले लोग धार्मिक हैं तो दुनिया में इतना अधर्म क्यों है? यह अधर्म कहां से आ रहा है? सच तो यह है कि जो आदमी पचास वर्ष तक एक ही किताब को रोज-रोज पढ़ता रहा है, 'मैं निवेदन करूंगा कि उसने उस किताब को एक-दो दिन में नहीं पढ़ा होगा, क्योंकि अगर पढ़ लिया होता तो दोबारा दोहराने की जरूरत नहीं होती। अगर उसने जान लिया होता तो दोबारा कोई सवाल नहीं होता। लेकिन उसे रोज दोहराता रहा है वह, मशीन की भांति, यंत्र की भांति। पहले दिन जब उसने पढ़ा होगा तब शायद कुछ समझा भी होगा। पचास वर्ष पढ़ने के बाद वह जो पढ़ेगा, कुछ भी नहीं समझेगा, क्योंकि पढ़ने की जरूरत नहीं है। अब तो उसके पास शब्द इकट्ठे हो गये हैं, जिनको वह दोहरा लेता है। हमारा धर्म इन शब्दों का और इन संगठनों का धर्म रह गया है। ऐसे धर्म में मनुष्य के लिए कोई भविष्य नहीं है। ऐसे धर्म को जाने ही दें।

तो मैंने उस आदमी से उस पहाड़ पर कहा कि जरूर मर गया है ईश्वर, लेकिन यह चिंता की बात नहीं है। यह खुशी का अवसर है। यह स्वागत के योग्य घटना है, क्योंकि इससे यह संभावना बनती है कि शायद हम उस ईश्वर को खोज सकें, जो कि वस्तुतः है। शायद हम उस धर्म की खोज में गतिमान हो सकें जो कि जीवन को रूपांतरित कर देगा। इसके द्वारा जीवन प्रेम से, आनंद से और आलोक से भर जाए तो हम कहेंगे कि वह धर्म है और जिसके द्वारा जीवन इन सारी बातों से न भरा हो, अंधकार अपनी जगह रहा हो और धर्म की पूजाएं और प्रार्थनाएं एक तरफ चलती रहीं हो और दुनिया की दीनता और दरिद्रता और दुख और दुर्भाग्य, कोई भी परिवर्तित न हुआ हो और मनुष्य वैसे का वैसा हो, जैसा हजारों-हजार साल पहले था तो ऐसे धर्म को लेकर क्या करेंगे? ऐसे धर्म को जिंदा रखकर क्या करेंगे?

एक फकीर एक सुबह एक मस्जिद के पास से निकलता था। अंधा था, आंखें नहीं थीं। उसने मस्जिद के द्वार पर हाथ फैलाये और कहा—मुझे कुछ मिल जाए। किसी राह चलते ने कहा—तू पागल है? यह तो मस्जिद है। यहां क्या मिलेगा? यह तो परमात्मा का घर है, कहीं और मांग। वह फकीर भी अजीब रहा होगा। उसने कहा—जब परमात्मा के घर से कुछ नहीं मिलेगा तो फिर किस घर से मिलेगा? वह वहीं बैठ गया, वह अंधा आदमी और उसने कहा कि अब तो यहां से तभी विदा होंगे जब कुछ मिल जाएगा, क्योंकि यह तो आखिरी घर आ गया। अब इसके आगे घर कहां है? और यदि यहां नहीं मिलने वाला है तो फिर हाथ फैलाए रहना व्यर्थ है? फिर अब आगे कहां जाऊं? यह तो अंतिम घर आ गया। इसके बाद और कौन घर है?

वह वहीं रुक गया। आंखें उसकी जरूर अंधी रही होंगी, लेकिन हमसे ज्यादा देखने की उसमें ताकत थी। उसने अपने हाथ उठा लिये। एक वर्ष तक वह उस द्वार से नहीं हटा। दिन आए, गए! रातें आयीं, गयीं। वर्षा आयी, बीती! मौसम आए और गए। चांद उगे और ढले। लोग हैरान थे, वह फकीर वहीं बैठा रहा। कोई आ जाता और कुछ दे जाता तो भोजन कर लेता। कोई पानी दे जाता तो वह पानी पी लेता। लेकिन उस द्वार से नहीं हटा। और बरस पूरे होते-होते एक दिन सुबह लोगों ने देखा कि वह नाच रहा था और उसकी अंधी आंखों में भी एक अद्‌भुत सौंदर्य की झलक मालूम हो रही थी और उसके मुर्झाये चेहरे में कोई नया जीवन आ गया था। उसने लकड़ी फेंक दी और वह नाच रहा था और कृतज्ञता के शब्द बोल रहा था।

लोगों ने पूछा—क्या हुआ? उसने कहा—यह मुझसे मत पूछो। मुझे देखो और समझो। आप मुझसे यह मत पूछें कि क्या हुआ है? अब मुझे देखें और समझें। मेरी अंधी आंखों में दिखाई पड़ने लगा है। अब मैं देख रहा हूं। तुमको नहीं, बल्कि उसको, जो तुम्हारे भीतर है। अब मैं देख रहा हूं उसको, जिसकी खोज है। और अब मैं देख रहा हूं कि कहीं कोई मृत्यु नहीं और अब मैं देख रहा हूं कि कहीं कोई दुख नहीं है और मैं देख रहा हूं कि मैं तो मिट गया हूं, लेकिन मिट कर भी मैंने कुछ पा लिया, जो उससे भी बहुत ज्यादा बहुमूल्य है जो मैंने खोया है। मैंने कुछ न खोया और मैंने सब कुछ पा लिया है। लेकिन यह मुझसे मत पूछो। और लोगों ने देखा कि उससे पूछने की कोई जरूरत भी नहीं रही। उसका आनंद कह रहा था। उसका संगीत कह रहा था। उसका गीत कह रहा था। उसका नृत्य कह रहा था। अगर दुनिया में धर्म होगा तो लोगों

का आनंद कहेगा। लोगों का प्रेम कहेगा। लोगों के गीत कहेंगे। अभी तो लोगों के पास सिवाय आंसुओं के कुछ भी नहीं है। उनके हृदय में सिवाय अंधकार के कुछ भी नहीं है। उनके मस्तिष्क सिवाय उलझन, तनाव और अशांति के किसी दूसरी चीज से परिचित नहीं हैं। यह जमीन के लोगों का हाल है। इस हालत में धर्म कैसे हो सकता है?
इसलिए जो धर्म है, वह धर्म नहीं है। लोगों के आंसू इसका सबूत हैं, लोगों का अंधकार इसका सबूत है। यह आंसुओं और अंधकार वाला ईश्वर मर गया है तो अच्छा है। प्रकाश वाले ईश्वर का जन्म कैसे हो सकता है, यह मैं आने वाली चर्चाओं में आप से बात करूंगा। लेकिन एक बात कह दूं—मेरी बातों से उसका जन्म नहीं हो सकता। मेरी बातें उसके लिए ज्ञान नहीं बन सकती हैं। इसलिए आप और लोगों को सुनने जाते होंगे, वे देते होंगे आपको ज्ञान। मैं तो इन तीन दिनों में कोशिश करूंगा कि आपका सारा ज्ञान छीन लूं। आप अज्ञानी हो जाएं। परमात्मा करे, आपका सब ज्ञान छिन जाए और आप अज्ञान की सरलता में खड़े हो जाएं तो शायद उसे जान सकें, जो सत्य है। मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं और अंत में, सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जो मिटेगा, वही पायेगा

कल संध्या एक बात मैंने आपसे कही थी। उस संबंध में बहुत-से प्रश्न उपस्थित हुए हैं। मैंने कल आपको कहा कि ईश्वर मर गया है और वह घटना सौभाग्यपूर्ण है, क्योंकि जो ईश्वर मर गया है, वह ईश्वर ही नहीं था। जो मर सकता है, वह ईश्वर ही नहीं है। जो अविरत है। सदा है और शाश्वत है, वही ईश्वर है। उस शाश्वत ईश्वर को जानने के लिए, मनुष्य को स्वयं ही मिटना पड़ता है, ईश्वर को बनाना नहीं पड़ता है। उस शाश्वत ईश्वर को पाने के लिए मनुष्य को ईश्वर निर्मित नहीं करना होता है, वरन स्वयं को ही प्रेरणा देनी होती है और स्वयं को मिटा देना होता है। मनुष्य मिटता है तो ईश्वर उपलब्ध होता है। मनुष्य जब स्वयं को खोता है तो परमात्मा को पाता है। जो ईश्वर मर गया है, वह मनुष्य के द्वारा निर्मित ईश्वर था। मनुष्य ने जिसे बनाया है, वह मिटेगा। उस अनबनाए को, अनिक्रियेटेड को जानना है, जो कि नहीं मिटता है तो मनुष्य को स्वयं को खोना जरूरी है।
रामकृष्ण एक छोटी-सी कहानी कहा करते थे। वह कहते थे कि समुद्र के किनारे एक बार बहुत लोगों की भीड़ इकट्ठी हुई। कोई मेला था और वे सभी लोग यह विचार करने लगे कि समुद्र की गहराई कितनी है। और तभी एक नमक का पुतला भी वहां आया और उसने कहा—ठहरो! मैं जाता हूं और गहराई का पता लगाकर अभी आता हूं। वह नमक का पुतला सागर में कूद गया। दिन आये और गये। सूरज उगा और डूबा। धीरे-धीरे मेला उजड़ने लगा, भीड़ छंट गयी, लोग अपने घरों को वापस लौट गये। वह पुतला वापस नहीं लौट सका। बहुत प्रतीक्षा रही कि वह लौटे और बताये कि सागर की कितनी गहराई है। लेकिन वह नहीं लौटा, वह नहीं लौट सका। अगर लौट आता तो उसका अर्थ होता कि सागर का उसके साथ स्पर्श नहीं हुआ और सागर की गहराई उसने जानी तो उस जानने में विलीन हो गया। नमक का पुतला था वह तो!
मनुष्य भी परमात्मा में उतरते समय नमक के पुतले से ज्यादा नहीं है। सागर नमक से बना है, नमक सागर से बनता है। मनुष्य परमात्मा से बना है। मनुष्य खोजने जाएगा, परमात्मा को खोजेगा, वैसे ही जैसे नमक का पुतला सागर में खोजता है। इ

सलिए मनुष्य ने एक तरकीब ईजाद की ईश्वर से बचने की और वह यह कि ईश्वर को खोजना उसने बंद कर दिया और ईश्वर को बनाना उसने शुरू कर दिया। ऐसे मनुष्य भी बच गया और ईश्वर भी निर्मित कर लिया गया।
स्वभावतः बहुत प्रकार के ईश्वर निर्मित हो गये—हिंदू के, मुसलमान के, ईसाई के, जैन के, बौद्ध के। हजार-हजार प्रकार के ईश्वर निर्मित हो गये। अपनी-अपनी रुचि के भगवान सभी लोगों ने बना लिए। ये जो ईश्वर हैं—मैंने कल कहा, ये मर गये हैं और यह शुभ है! मुझसे बहुत-से प्रश्न पूछे गए हैं, जिनमें से अधिक इसी बात से सं बंधित हैं। उनका पहले मैं आपको उत्तर दूंगा।
पूछा है कि कैसे पता चला है कि यह ईश्वर मर गया है?
मनुष्य को देखकर यह पता चलता है कि ईश्वर मर गया है। कहीं खोजने से ईश्वर की लाश नहीं मिलेगी और न किसी कब्र पर लगा हुआ पत्थर ही मिलेगा कि यहां दफनाया गया है। और न जमीन के कोने-कोने में खोज लेने पर यह पता लगेगा कि कौन से लोग गवाह हैं जिनके सामने वह मरा है। नहीं, ईश्वर के मर जाने की गव ाही तो हम सारे लोग हैं। एक-एक आदमी के जीवन में इतना दुख, इतना अहंकार, इतनी पीड़ा और अशांति किस बात की सूचना है? इस बात की कि यह आनंद क ा स्रोत था जो जीवन में प्रकाश का स्रोत था, उससे हमारे संबंध विच्छिन्न हो गये हैं । वह संबंध टूट गया है।
एक रात एक घर में एक अंधा आदमी मेहमान हुआ। आधी रात बीत जाने पर वह विदा होने लगा तो घर के लोगों ने कहा—रास्ता अंधेरा है। अमावस की रात है। तु म एक लालटेन हाथ में लेते जाओ। अंधा आदमी हंसने लगा, जैसा कि स्वाभाविक था। उसने कहा—मेरे हाथ में लालटेन होने और न होने से क्या फर्क पड़ेगा? मैं तो अंधा हूं। रात अंधेरी है या उजाली और दिन है या रात, इससे भी फर्क नहीं पड़ता । मेरे लिए तो सब अंधेरा है और हाथ में लालटेन होगी तो क्या होगा? आकाश में सूरज होगा, तब भी कुछ नहीं होगा। बात तो उसकी ठीक थी, लेकिन उस घर के लोग भी बड़े तार्किक थे। वह मानने को राजी न हुए। उन्होंने कहा—यह तो सच है कि तुम्हारे हाथ में, तुम्हारी आंखों के लिए, लालटेन से कोई फर्क नहीं पड़ेगा। लेकिन अंधेरे में आते हुए दूसरे लोगों को तो लालटेन दिखायी पड़ेगी, वह तो कम-से-कम तुमसे टकराने से बच जाएंगे। इतना क्या कम है? और इस दलील के सामने उ स अंधे आदमी को झुक जाना पड़ा और वह लालटेन लेकर निकला। लेकिन वह को ई सौ कदम नहीं गया होगा कि कोई आदमी उससे टकरा गया। वह बहुत हैरान हु आ। उसने पूछा—मेरे मित्र! क्या आप भी अंधे हो, मेरे हाथ की लालटेन दिखायी नह ीं पड़ती? तो दूसरे आदमी ने कहा—महानुभाव! आपकी लालटेन कहीं बीच में बुझ गयी।
अंधे आदमी को कैसे पता चले कि लालटेन बुझ गयी है। आप पूछते हैं कि हमें कैसे पता चले कि ईश्वर मर गया है! अंधे आदमी को कैसे पता चले कि लालटेन बुझ गयी है। इस बात से पता चलेगा कि टक्कर हो गयी। टक्कर होना इस बात का सबू

त है कि लालटेन बुझ गयी और हम सब की एक-दूसरे से टक्कर हो रही है। क्या यह ईश्वर के मर जाने का सबूत नहीं है? क्या यह लालटेन के बुझ जाने का सबूत नहीं है? यह लालटेन के बुझ जाने का ही सबूत है। हम जिंदगी में कर क्या रहे हैं ? जी रहे हैं या लड़ रह हैं।? प्रेम कर रहे हैं या क्रोध कर रहे हैं? एक-दूसरे को दे रहे हैं या छीन रहे हैं? एक-दूसरे के जीवन में सहयोगी हैं या शत्रु हैं? इस बात से सबूत मिलेगा कि ईश्वर मर गया है या नहीं मर गया है। इसे पूछने किसी और से मत जाना कि ईश्वर मर गया है कि नहीं? अपनी जिंदगी को देख लेना और अग र वह आस-पास टकराहट पैदा करती हो, क्रोध और हिंसा पैदा करती हो तो जान लेना कि हाथ की लालटेन बुझ गई । और तुम्हारे संबंध टूट गये हैं जीवन के स्रोत से। इसे खोजने या कहीं और जाने की किसी को भी कोई जरूरत नहीं है। मुझे कैसे पता चला है कि ईश्वर मर गया है? आदमी को देखकर पता चलता है। आदमी ई श्वर की कब्र बन गया है। इससे बड़ी और क्या खबर हो सकती है कि आदमी एक मुर्दे की भांति जी रहा है। उसके भीतर राख है, जीवन की कोई आग नहीं। उसके भीतर सब मुर्दा है। जीवन और जलता हुआ कुछ भी नहीं, सब बुझा-बुझा है। यह खबर है, यही सूचना है। और अगर यह भी सूचना नहीं है तो फिर और क्या इससे सूचनाएं बंद हो सकती हैं?

पूछा है कि अगर ईश्वर मर गया है तो क्या हम निराश हो जाएं?

नहीं! ईश्वर के मरने से निराश होने का कोई संबंध नहीं है। यदि झूठा ईश्वर, जिसे हम ईश्वर समझते रहे हैं, समाप्त हो गया हो तो सच्चे ईश्वर की खोज शुरू हो स कती है। हीरों के दुश्मन पत्थर नहीं हैं, नकली हीरे हैं। पत्थरों ने हीरों से कोई दुश मनी नहीं की है। उनसे उनका कोई नाता-रिश्ता नहीं है। नकली हीरे, असली हीरों के दुश्मन हैं। ईश्वर से उन लोगों का विरोध नहीं, जो कहते हैं ईश्वर नहीं है। ईश्व र की शत्रुता वे लोग कर रहे हैं, जिन्होंने झूठे ईश्वर गढ़ लिये हैं। उन्होंने मनुष्य को सच्चे ईश्वर तक जाने के लिए, हमेशा के लिए रोक लिया है। इसलिए नास्तिकों से मत घबराना। नास्तिक तो एक दिन अपनी नास्तिकता की पीड़ा से आस्तिक हो जा एगा। कोई अगर नास्तिक है पूरा-पूरा तो बहुत दिन तक नास्तिक नहीं रह सकता। उसकी नास्तिकता ही उसे आस्तिकता में ले जाएगी नास्तिकता तो सीढ़ी है। लेकिन जो झूठे आस्तिक हैं, वे कभी आस्तिक नहीं हो सकेंगे, क्योंकि उन्हें नास्तिकता की स ीढ़ी उपलब्ध नहीं हुई, जिसे पार करके कोई आस्तिकता आ सकती है। जिसने कभी पूरे मन से ईश्वर की प्रचलित धारणाओं पर संदेह नहीं किया, वह आदमी कभी भ ी सच्चे ईश्वर की तरफ गतिमान नहीं हो सकेगा, क्योंकि संदेह ही वह शक्ति थी, जो झूठे ईश्वर को गिरा देती है। उसने संदेह की उस शक्ति का प्रयोग नहीं किया। उसने झूठे ईश्वर का विश्वास कर लिया, जैसे और सारे लोग विश्वास कर रहे हैं, उसने भी विश्वास कर लिया है।

पूछा है, यदि हम इस तरह से संदेह से भर जाएं, तब विश्वास कैसे पैदा होगा?

क्या ईश्वर मर गया है?

क्या आपको यह पता नहीं है कि केवल उन्हीं लोगों को जीवन में और भाग्य में विश्वास की संपदा मिलती है, जो सम्यक रूप से संदेह करना जानते हैं। 'राइट डाउट' करना जो जानते हैं वे ही लोग विश्वास की संपदा को उपलब्ध होते हैं। वे लोग नहीं जो संदेह करने से डरते हैं, क्योंकि जो संदेह करने से डरता है, उसका विश्वास झूठा होगा। इसलिए वह संदेह करने से डरता है, क्योंकि वह जानता है कि संदेह किया कि विश्वास गया। इसलिए झूठे विश्वास वाले लोग दूसरे लोगों को समझाते हैं कि संदेह मत करो, क्योंकि संदेह की आग में उनके विश्वास, जो बिलकुल कागजी हैं, जिंदा नहीं रह सकेंगे, जल जाएंगे। इसलिए जो भी यह समझता हो कि विश्वास करो, संदेह नहीं, समझ लेना कि उसका विश्वास झूठा है। संदेह की अग्नि-परीक्षा में से गुजरने को राजी नहीं है। जो विश्वास संदेह की अग्नि-परीक्षा में से गुजरने को तैयार है, वही सत्य है। इसलिए इसके पहले कि आपके पास विश्वास आए, जान रखना कि संदेह की पगध्वनियां, उसके पहले सुननी जरूरी हैं। जो समग्र हृदय से संदेह करता है, उस संदेह में विश्वास जम जाते हैं जो असत्य हैं और केवल वे ही सत्य निखर कर वापस लौट आते हैं, जिन पर कि जीवन को आधारित किया जा सकता है, गतिमान किया जा सकता है। इसलिए संदेह से भयभीत मत होना। संदेह से जो भी भयभीत हो जाता है वह कभी धार्मिक नहीं हो पायेगा।

पूछा है कि मैंने कहा कि पुजारियों ने, पंडितों ने, धर्मपुरोहितों ने, मनुष्य को ईश्वर की तरफ, ईश्वर के ज्ञान की तरफ जाने से रोका है तो क्या पुजारी कुछ भी नहीं जानते? क्या हजारों साल से उन्होंने कुछ भी नहीं जाना है? क्या वे बिलकुल अज्ञानी हैं?

नहीं, पुजारी बहुत कुछ जानते हैं। यही तो खतरा है। अगर वे अज्ञानी होते तो उतना खतरा नहीं होता। वे बहुत कुछ जानते हैं, उनके जानने में ही खतरा है। एक छोटी-सी कहानी कहूं तो उससे मेरी बात शायद समझ में आ जाए।

एक राजा ने दरबार में सुबह ही सुबह दरबारियों को बुलाया। उसका दरबार भरता ही जाता था कि एक अजनबी यात्री वहां आया। वह किसी दूर देश का रहने वाला होगा। उसके वस्त्र पहचाने हुए से नहीं मालूम पड़ते थे। उसकी शक्ल भी अपरिचित थी, लेकिन वह बड़े गरिमाशाली और गौरवशाली व्यक्तित्व का धनी मालूम होता था।सारे दरबार के लोग उसकी तरफ देखते ही रह गए। उसने एक बड़ी शानदार पगड़ी पहन रखी थी। वैसी पगड़ी उस देश में कभी नहीं देखी गयी थी। वह बहुत रंग-बिरंगी छापेदार थी। ऊपर चमकदार चीजें लगी थीं। राजा ने पूछा—अतिथि! क्या मैं पूछ सकता हूं कि यह पगड़ी कितनी महंगी है और कहां से खरीदी गई है? उस आदमी ने कहा—यह बहुत महंगी पगड़ी है। एक हजार स्वर्ण मुद्रा मुझे खर्च करनी पड़ी हैं। वजीर राजा की बगल में बैठा था। और वजीर स्वभावतः चालाक होते हैं, नहीं तो उन्हें कौन वजीर बनायेगा? उसने राजा के कान में कहा—सावधान! यह पगड़ी बीस-पच्चीस रुपये से ज्यादा की नहीं मालूम पड़ती। यह हजार स्वर्ण मुद्राएं बता रहा है। इसका लूटने का इरादा है।

उस अतिथि ने भी उस वजीर को, जो राजा के कान में कह रहा था, उसके चेहरे से पहचान लिया। वह अतिथि भी कोई नौसिखिया नहीं था। उसने भी बहुत दरबार देखे थे और बहुत दरबारों में वजीर और राजा देखे थे। वजीर ने जैसे ही अपना मुंह राजा के कान से दूर हटाया, वह नवागंतुक बोला—क्या मैं फिर लौट जाऊं? मुझे कहा गया था कि इस पगड़ी को खरीदने वाला सारी जमीन पर एक ही सम्राट है। एक ही राजा है। क्या मैं लौट जाऊं इस दरबार से। और मैं समझूं कि यह दरबार, वह दरबार नहीं है जिसकी कि मैं खोज में हूं? मैं कहीं और जाऊं? मैं बहुत से दरबारों से वापस आया हूं। मुझे कहा गया है कि एक ही राजा है इस जमीन पर, जो पगड़ी को एक हजार स्वर्ण मुद्राओं में खरीद सकता है। जो क्या मैं लौट जाऊं? क्या यह दरबार वह दरबार नहीं है?

राजा ने कहा—दो हजार स्वर्ण मुद्राएं दो और पगड़ी खरीद लो। वजीर बहुत हैरान हुआ। जब वजीर चलने लगा तो उस आए हुए अतिथि ने वजीर के कान में कहा—मित्र! यू मे बी नोइंग द प्राइस आफ द टर्बन,बट आइ नो वीकनेसेस आफ द किंग्स। तुम जानते हो कि पगड़ी के दाम कितने हैं, लेकिन मैं राजाओं की कमजोरियां जानता हूं।

पादरी, पुरोहित और धर्मगुरु ईश्वर को तो नहीं जानते हैं, आदमी की कमजोरियों को जानते हैं और यही उनसे खतरा है। उन्हीं कमजोरियों का शोषण चल रहा है। आदमी बहुत कमजोर है और बड़ी कमजोरियां हैं उसमें। उसकी कमजोरियां का शोषण हो रहा है।

स्मरण रखें—जो परमात्मा की शक्ति को जानता है, उसके लिए जमीन पर कोई कमजोरी नहीं रह जाती और जो परमात्मा को पहचानता है, उसके लिए शोषण असंभव है।

लेकिन मनुष्य का शोषण चल रहा है, धर्म के नाम पर, मंदिर और मस्जिद के नाम पर। और हजारों-हजारों वर्षों से यह शोषण चलता है। और हम सब इस शोषण में सहभागी हैं। यह भी हो सकता है कि हम उस शोषण को न कर रहे हों, लेकिन अगर हम उस शोषण को अपने पर होने दे रहे हैं तो हम उस शोषण को बनाए रखने में साथी हैं, संगी हैं। जमीन पर जो भी पाप हो रहे हैं, कोई यह न समझे कि वह उनसे बच जाएगा। जमीन पर हुए पाप हम सबके सहभागी में घटित हुए हैं। जमीन पर जो कुछ हो रहा है, वह सब एक-एक आदमी उसके लिए जिम्मेदार है। कोई यह न सोचे कि वह बच जाएगा। कोई नहीं बच सकता। हम जाने-अनजाने साथ दे रहे हैं, हम सहयोगी हैं।

मनुष्य की कमजोरियों का शोषण राजनीतिज्ञ कर रहे हैं, धर्मगुरु कर रहे हैं और न मालूम किस-किस तरह के लोग कर रहे हैं। लेकिन सबसे गहरा शोषण धर्मगुरुओं ने किया है। अभी राजनीतिज्ञ तो बहुत पीछे से आये हैं उस दौड़ में। बहुत पीछे से उसको यह बात समझ में आई कि धर्मगुरु क्या कर रहा है? राजनीतिज्ञ अभी पीछे-पीछे आया है और इसलिए पीछे-जनों की जो राजनीति है, वह धर्मगुरुओं के विरोध

में खड़ी है। उसका कोई और कारण नहीं है। दो चार एक ही आदमी की संपत्ति प
र आंख लगाए हुए हैं।
इसलिए पिछला जो राजनीतिज्ञ है, अभी-अभी, नया-नया, जो सारी दुनिया में राजन
ीति है, चाहे वह कम्यूनिज्म हो, चाहे वह फासिज्म हो, चाहे वह कुछ और हो, उन
सब की टक्कर धर्मगुरुओं से है। क्यों? एक ही आदमी पर दोनों का हमला है। दोनों
का शिकार एक ही आदमी को बनना है, वही कमजोर आदमी है। इन दोनों के बी
च टक्कर पुरानी है, लेकिन अभी बहुत प्रगाढ़ हो गई है। और राजनीतिज्ञ धर्म को
हटा देने की कोशिश में हैं। कई मुल्कों से धर्म को हटा दिया गया है। मंदिर से ईश्व
र को विदा कर दिया गया है। उनकी जगह नये ईश्वर गढ़ना शुरू कर दिये, नई मूर्
तियां वहां स्थापित हो गईं, नये प्रतिमान वहां बन गये हैं। लेकिन आदमी का शोषण
जारी रहेगा, क्योंकि आदमी की कमजोरी बरकरार है। एक ने शोषण बंद किया त
ो दूसरा उस शोषण को शुरू कर देगा।
मैं आपसे यह निवेदन करना चाहता हूं कि धार्मिक लोग वे ही हैं, जो मनुष्य की क
मजोरियों को समझें। और उस मनुष्य की कमजोरियों में चल रहे शोषणों के विरोध
में एक विश्वव्यापी चेतना को जन्म दें। क्या हैं कमजोरियां मनुष्य की? और किस
भांति उस मनुष्य की कमजोरियों का शोषण हो रहा है? इसे कुछ विस्तार में कहने
की बात नहीं है। हम सब अपनी कमजोरियां जानते हैं और उस कमजोरी के लिए
क्या-क्या प्रलोभन हमें दिये जा सकते हैं, वह भी हम जानते हैं। हम आदमी की, व्य
क्ति की कमजोरी जानते हैं। हर आदमी मृत्यु से डरता है, इसलिए सभी धर्म, मृत्यु
का बड़े पैमाने पर शोषण करते हैं। मनुष्य डरता है कि मैं मर न जाऊं और धर्म
समझाते हैं कि आत्मा अमर है तो कोई फिक्र नहीं। शरीर चला जाएगा, चला जाने
दो। आत्मा तो बचेगी। मैं तो बचूंगा। हम सब बचना चाहते हैं।
यह जो हम विश्वास करते हैं कि आत्मा अमर है तो आप यह मत समझ लेना कि
आपको पता है कि आत्मा अमर है। नहीं, आप मृत्यु से भयभीत हैं, इसलिए जल्दी
में विश्वास कर लिया है कि आत्मा अमर है। सबको पता है कि कोई नहीं मरना च
ाहता। यह दुनिया के सभी धर्म-पुरोहित यह समझाने की कोशिश करते हैं कि घबरा
ते क्यों हो--कोई मरता ही नहीं, आत्मा बिलकुल अमर है। और मृत्यु से भयभीत म
नुष्य यह विश्वास कर लेना चाहता है कि आत्मा अमर है। इसीलिए जवान आदमी
कम धार्मिक होता है, बूढ़ा आदमी ज्यादा धार्मिक होता है। मौत जितनी करीब आत
ी है, उतना मृत्यु का भय भी करीब आता है और आदमी को आत्मा की अमरता
को मान लेने में मन तीव्र हो जाता है। जल्दी होती है कि मान लो, विश्वास कर ल
ो। कोई भी मरना नहीं चाहता। यही कमजोरी है हमारे भीतर और इसीलिए जो कौ
म जितनी मृत्यु से भय करने वाली होती है, वह कौम उतनी ही आत्मा की विश्वा
सी होती है, अमरता की विश्वासी होती है।
हमीं हैं जमीन पर, हमसे ज्यादा मौत से कौन डरता होगा? आत्मा की अमरता कर
ने वाले लोग भी जमीन पर और कहीं नहीं हैं। इन दोनों बातों में संबंध है। यह दो

नों बातें अलग-अलग नहीं हैं। ये दोनों बातें एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। तो सोचें गे मृत्यु को, उसके भय को कि आदमी असुरक्षित है। यह उसकी 'सिक्योरिटी' है। सब तरह की। कहीं कोई सुरक्षा नहीं मालूम होती, जिंदगी डांवाडोल है। कहीं कोई सहारा नहीं मिलता है। आदमी बेसहारा है। आदमी का बेसहारा होना एक कमजोरी है। उस कमजोरी का शोषण धर्म करता है। पंडित, पुरोहित करते हैं, मंदिर और ि गरजे करते हैं। वे कहते हैं बेसहारा क्यों हो? भगवान का सहारा लो। भगवान का हाथ थामो। और क्योंकि भगवान का हाथ थामने के बीच वे मध्यस्थ हैं, इसीलिए वे उनकी दलाली करते हैं। वह उनका वेद है। तुम भगवान का हाथ थाम लो।
आदमी अकेले में डरा हुआ है। घबराया हुआ है अकेले में। भय मालूम होता है। जिं दगी बड़ी अकेली है। कोई संगी-साथी नहीं मालूम होता। क्षण आते हैं, जब पत्नी अ पनी नहीं मालूम होती, लड़का अपना नहीं मालूम होता मित्र अपने नहीं मालूम होते , कमजोरियां, बीमारियां आती हैं, मौत करीब आती है। तब लगता है, सब छूट ज ाएगा! धन-संपत्ति कोई अपना नहीं मालूम होता। तब पुरोहित पास आता है और क हता है, मित्र! घबराओ मत। परमात्मा साथी है, उसका नाम जपो। वह तो तुम्हारे साथ है। उसका नाम जपो और तब इस कमजोरी का शोषण किया जामा है और य ह जो परमात्मा का जाप, आप कर लेते हैं तो यह मत समझ लेना कि परमात्मा से बहुत प्रेम आपका पैदा हो गया है, इसीलिए आप जाप कर रहे हैं। आप भयभीत हैं , जिंदगी में अकेले हैं इसीलिए परमात्मा का साथ खोज रहे हैं और ऐसा कोई साथ नहीं मिलेगा, क्योंकि जो भयभीत है उसका प्रेम से कभी कोई संबंध नहीं हो सकत ा है।
जो अभय है, फियरलेसनेस में जिसका चित्त है, वही केवल प्रेम कर सकता है, भय भीत लोग कैसे प्रेम करेंगे? परमात्मा को कैसे प्रेम करेंगे? परमात्मा को कैसे जानेंगे ? फियर तो कुछ भी जानने नहीं देता। लेकिन हमारे भय का शोषण किया जा रहा है, हमें समझाया जा रहा है कि भयभीत हो जाओ। 'गाड फियरिंग' 'ईश्वर से डर ो,' क्यों? क्योंकि अगर ईश्वर से नहीं डरोगे तो पुजारी से कैसे डरोगे, धर्मपुरोहित से कैसे डरोगे? ईश्वर से भयभीत हो जाओ जितने ही भयभीत हो जाओगे, उतना ही शोषण किया जा सकता है। अभय से व्यक्ति का शोषण किया जा सकता है। इस लिए धर्म के नाम पर बचपन से ही भय सिखाया जाता है कि डरो हर चीज से, भ यभीत हो जाओ। यह सब शोषण है, हमारी सारी कमजोरियों का शोषण है। यह ज ो मौत का डर है, हम सब डरे हुए हैं। कहीं आग में हमें न जलाया जाए, कहीं हमें जलते कड़ाहों में न सेका जाए, कहीं हमें सताया न जाए। हम सब डरे हुए हैं। नर क का भय खड़ा हुआ है। स्वर्ग के प्रलोभन में हम सब तिरोहित हैं।
एक जगह से मैं निकलता था। एक महिला ने लाकर मुझे कागज दिया। उसके ऊपर लिखा हुआ था कि क्या आप बहुत अच्छे बंगले में रहना चाहते हैं, जहां कि मनोर म हवाएं बहती हों, पास में झरने हों, बड़े-बड़े छायादार वृक्ष हों। मैं हैरान हुआ कि ऐसी जगह कहां पर है? कौन नहीं रहना चाहेगा? मैंने दूसरा पन्ना पलटा तो उसमें

पीछे लिखा था—फिर जीसस क्राइस्ट को स्वीकार कर लो। मैं बहुत हैरान हुआ जो जीसस क्राइस्ट को स्वीकार कर लो। मैं बहुत हैरान हुआ जो जीसस क्राइस्ट को स्वी कार कर लेगा परमात्मा के लोभ में वह 'किंगडम आफ गाड' में है। उसको अच्छे-अच्छे मकान, झरनों के किनारे, छायादार वृक्षों के नीचे मिलेंगे और जो नहीं विश्वा स करेंगे, उनका स्थान नरक में है।

यह जीसस क्राइस्ट के पीछे शैतान जो लगे हैं, उनकी ही यह करतूत है, ऐसा नहीं। राम के पीछे भी लगे हैं, कृष्ण के पीछे भी लगे हैं, मोहम्मद के, महावीर के, बुद्ध के पीछे, सबके पीछे लगे हैं। और वे ईजाद कर रहे हैं आदमी की कमजोरी का श ोषण करने को। किसका मन नहीं हो जाएगा ठंडी-ठंडी हवाओं वाली दुनिया में रहने का? जहां कोई दुख न व्यापता हो, जहां कोई कष्ट न आता हो। और कितने सस्ते हैं? बहुत सस्ते हैं कि मंदिर में जाओ, थोड़े से पैसे चढ़ाओ या एक ब्राह्मण को गा य दान कर दो, कितने सस्ते हैं? कौन पागल होगा, कौन नासमझ होगा, जो यह मौ का चूक जाएगा?

जो हमारा प्रलोभन है, उसका शोषण है। हमारा भय है, उसका शोषण है। हमारी मृ त्यु है, उसका शोषण है। पुजारी बहुत कुछ जानते हैं, ह्यूमेन वीकनेसेस जानते हैं। और आदमी को अब तक इस बात का पता नहीं है कि उसकी कमजोरियों का कि तना शोषण हुआ है और कितना शोषण हो रहा है।

दुनिया में सच्चे धर्म का जन्म तभी होगा जब मनुष्य को, उसकी कमजोरियों से मुक त करने में लगें, न कि उसकी कमजोरियों का शोषण चलने दें। मनुष्य को उसकी कमजोरी से मुक्त करना है। मनुष्य को अभय अलोभ, स्वतंत्रता, विचार, यह सब दे ने हैं, ताकि उसके भीतर एक गरिमा, चिंतन, चेतना, एक गौरवपूर्ण जीवन खड़ा हो सके, ताकि वह हर शोषण के विरोध में, उसके भीतर एक बगावत, एक विद्रोह खड़ा हो सके। ऐसे लोग एक धार्मिक दुनिया की शुरुआत बनेंगे। ये डरे हुए भयभी त लोग नहीं। ये घुटने टेककर जमीन पर बैठे हुए, हाथ जोड़े आकाश की तरफ बच चे मांगते हुए, बीमारी ठीक करने की प्रार्थनाएं करते हुए लोग नहीं, ये नरक से ब चने की कोशिश में लगे हुए लोग नहीं, ये मंदिर बनाकर स्वर्ग में अपना रिजर्वेशन करने वाले लोग नहीं। इन लोगों से दुनिया धार्मिक नहीं होती। इनसे ईश्वर का अव तरण जमीन पर नहीं हो सकता, जो कि सच्चा ईश्वर है। उसके लिए चाहिए समस्त कमजोरियों से मुक्त मनुष्य। और यह पुरोहितों और धर्मगुरुओं ने नहीं होने दिया है और वे कोशिश में लगे हुए हैं कि आगे भी न होने दें।

यह निश्चित है। उनकी कोशिश उनके व्यवसाय का प्राण है। उनके सारे प्रयास परमा त्मा से बचाने के प्रयास नहीं हैं। खुद को बचाने के प्रयास हैं। लेकिन यह तो आपको ज्ञात होगा ही कि हम जब भी कोई गलत काम करना चाहते हों तो अच्छे नारे या द कर लेने चाहिए। जब हमें कोई बुरा काम करना हो तो किसी अच्छी फिलासफी की आड़ ले लेनी चाहिए। और जब हमें किसी की हत्या करनी हो तो हमें उसके ही हित में हत्या करने का प्रचार शुरू कर देना चाहिए। और अगर पुरोहितों को अपने

व्यवसाय बचाने हैं तो उन्हें परमात्मा को बचाने की घोषणा करनी चाहिए। उन्हें कहना चाहिए कि परमात्मा खतरे में है। परमात्मा खतरे में है, अगर यह बात फैला दी जाए तो पुरोहित बच सकता है।

पुरोहित बचेगा तो धर्म नहीं बचेगा।

सामने विकल्प सीधा है। या तो जमीन पर आने वाले दिनों में धर्मगुरुओं का यह पुराना व्यवसाय जारी रहेगा और परमात्मा के लिए स्थान नहीं बनाया जा सकेगा या फिर यह व्यवसाय बंद होगा और हम एक ज्यादा मुक्त, ज्यादा स्वतंत्र चित्त से सत्य की खोज में संलग्न हो सकेंगे। इसलिए ठीक पूछा है कि क्या पुरोहित कुछ भी नहीं जानते हैं? पुरोहित बहुत कुछ जानते हैं। उनकी चालाकी, उनकी होशियारी बड़ी गहरी है। वे आदमी के आखिरी कोने तक की कमजोरी जानते हैं और इसका उन्होंने फायदा उठाया है, यह फायदा चल रहा है।

पूछी हैं और बहुत-सी बातें। पूछा है कि मैंने कहा कि शास्त्र को न मानें। शब्द को न मानें। तब तो फिर हम अकेले छूट जाएंगे तो हम क्या मानेंगे?

अकेले छूटने से इतने भयभीत क्यों होते हैं? और न मानने की स्थितियां इतना डर क्यों जाती हैं? क्या यह खयाल में कभी नहीं आता कि न मानने को अगर एक क्षण की स्थिति में भी एक क्रांति हो जाएगी। न मानने के एक क्षण की स्थिति में भी एक क्रांति हो सकती है। न मानने का क्या मतलब है? न मानना, नान एक्सेप्टेंस का मतलब क्या है? उसका मतलब यह है कि मैं बाहर से आए हुए किसी भी ज्ञान को स्वीकार करने को राजी नहीं हूं। क्यों? इसलिए कि मैं उस ज्ञान का प्यासा हूं जो कि भीतर से आया हो, इसलिए मैं ठहरूंगा।

यह बाहर के ज्ञान का अनादर नहीं है। यह बाहर के ज्ञान का तिरस्कार नहीं है। गीता-पुराण का अनादर नहीं है। सिर्फ इतना निवेदन है खोजी का कि मैं उस ज्ञान को पाना चाहता हूं, जो प्राणों के प्राणों से उठता है। मैं उसे खोजना चाहता हूं, जो मेरे भीतर कहीं है। इसलिए ठहरो। जो बाहर का है, चाहे महावीर कहते हों, चाहें बुद्ध, चाहे कोई, मैं कह रहा हूं—कोई भी जो बाहर से कह रहा है, उससे कहो कि वह ठहर जाए। वह विचार बाहर रुक जाए। कहीं ऐसा न हो कि बाहर का विचार आए और मेरे सारे चित्त को घेर ले और मैं बाहर के विचार में इस भांति कैद हो जाऊं कि मैं यह भूल जाऊं कि भीतर मेरे भी ज्ञान है। यह हुआ है। पांडित्य को ज्ञान का भ्रम पैदा हो जाना बिलकुल रोज की घटना है। जब बहुत-सी बातें हमें मालूम हो जाती हैं, बहुत-सी इनफॉरमेशन, बहुत-सी सूचनाएं इकट्ठी हो जाती हैं तो हमें खयाल पैदा हो जाता है कि हम जानते हैं।

और यह खयाल, जो भीतर ज्ञान बैठा हुआ है, जहां हम कुछ भी नहीं जानते हैं, कुछ भी नहीं पता है कि कैसे जन्म हुआ है, कैसे मृत्यु हो जाएगी। पता भी नहीं है कि जो जीवन चल रहा है वह क्या है? यह भी पता नहीं है कि श्वास क्यों चल रही है? क्या है? यह भी पता नहीं कि श्वास क्यों चल रही है? कुछ भी पता नहीं। 'इग्नोरेंस' गहरा है। अज्ञान बहुत गहरा है। कुछ भी पता नहीं है। क्या पता है आपक

ो? किसी को? एक-एक श्वास भी अपरिचित है, लेकिन फिर भी हम ज्ञान इकट्ठा कर लेते हैं और ज्ञान की छाया में और भ्रम में भूल जाते हैं इस गहरे अज्ञान को। यह खतरनाक स्थिति हो जाएगी, मौत उस सारे ज्ञान को छीन लेगी और रह जाएग ा साथ में केवल अज्ञान। इसलिए समझदार वे नहीं हैं जो ज्ञान को पकड़ कर ज्ञानी हो जाते हैं, जो बाहर के ज्ञान को कहते हैं कि ठहरो! अज्ञान मेरा है, यह ज्ञान तो पराया है। जिस दिन मेरा ज्ञान होगा, वही मेरे अज्ञान को तोड़ सकेगा।

स्मरण रखिए—अज्ञान मेरा है। ज्ञान दूसरों का है। दूसरों का ज्ञान मेरे अज्ञान को कै से तोड़ सकता है? मेरा ज्ञान ही मेरे अज्ञान को तोड़ सकता है। मेरा ज्ञान कैसे पैदा होगा? उसकी पहली शर्त तो यह है कि मैं पराए और उधार ज्ञान को स्वीकार न करूं। स्वीकार कर लिया तो खोज ही बंद हो जाएगी। अगर मैं स्वीकार न करूं औ र अपने अज्ञान में ठहर जाऊं तो क्या होगा? पूछा है, फिर तो हम अज्ञानी ही रह जाएंगे। नहीं।

अगर एक मकान में आग लगी हो और आप मकान के भीतर हों और आपको पता लग जाए कि बाहर आग लगी है, लपटें आपको दिखाई पड़ने लगें तो क्या आप पू छेंगे कि अब मैं क्या करूं? क्या आप आलमारियां खोलकर कोई शास्त्र निकालेंगे औ र विचार करेंगे कि जब आग लगी हो चारों तरफ तो क्या करना चाहिए? या आप उस भवन में किसी गुरु की तलाश करेंगे और उसके चरणों में बैठेंगे और कहेंगे ि क हे गुरुदेव! अब तो मुझे सच्चा मार्ग सुझाइये कि जब आग लगी हो तो क्या करन ा चाहिए? नहीं, गुरुदेव भी उसी मकान के भीतर रहेंगे। वह शास्त्र वहीं जलकर रहे गा और आप, आग को देखते ही बाहर हो जाएंगे। फिर आप किसी से पूछने नहीं जाएंगे कि क्या करूं। आपको दिखाई पड़ना कि आग लगी है, आपके सारे प्राणों को इकट्ठा कर देती हैं। आपकी सारी जीवंत ऊर्जा संगठित हो जाती है। आप एक क्षण भी नहीं पाते हैं कि कोई शैथिल्य है, कोई आलस्य है, कोई निद्रा है। एक क्षण में आप पाते हैं कि कोई प्रमाद नहीं, कोई सुस्ती नहीं। एक क्षण में आप पाते हैं कि ि वचार सचेत है, चेतना जाग्रत है और आप पूछते नहीं किसी से मार्ग। लपटों में मा र्ग खोजते हैं, बाहर निकल जाते हैं। बाहर निकल कर शायद आपको खयाल आ जा ए कि गुरुदेव भीतर रह गए हैं, शास्त्र भीतर रह गए हैं, जिनको हम ला नहीं पाए और जिनको हम देख भी नहीं पाए कि उनमें क्या लिखा है। हम क्या करें?

आग लगी हो और उसका पूरा तथ्य दिखाई पड़ जाए तो उस तथ्य के दर्शन से जी वन में एक क्रांति घटित होगी। अज्ञान का पूरा दर्शन हो जाए तो वह आग लगी हो ने से भी ज्यादा भयानक, ज्यादा तीव्र, ज्यादा उत्कट पीड़ा और ताप उत्पन्न करती है। और यह खयाल आ जाए कि मैं बिलकुल अज्ञान में हूं तो सब ज्ञान के बाहर नि कलने की, एक तीव्र ज्वलंत अभीप्सा, आकांक्षा, प्राणों के कण-कण में पैदा हो जाती है, वही आकांक्षा, अभीप्सा बाहर ले आती है। कोई गुरु बाहर नहीं लाता।

लेकिन अगर अज्ञान का बोझ उतर जाए। घर में आग लगी हो और कोई हमें बैठक र समझा रहा हो कि कहां आग लगी है, यह सब तो माया है। तुम तो राम-राम त

पो और हम आंख बंद करके राम-राम जप रहे हैं और मन में सोच रहे हैं कि कहां आग लगी है! आग तो लगी ही नहीं है। यही हम वहां बैठे सोचते रहेंगे तो फिर जरूर बाहर निकलना असंभव हो जाएगा। आग हमें लेकर ही समाप्त होगी। यही हुआ है, जीवन में यही हो रहा है।

उधार का ज्ञान हमें सुला देता है, जागता नहीं है। निद्रा लाता है, जागृति नहीं लाता।

खुद के ज्ञान का बोध, एक जागृति लाता है, एक खोज लाता है, एक अवेयरनेस पैदा होती है और एक तीव्रता पैदा होती है और एक तीव्रता का बोध पैदा होता है कि मैं कैसे बाहर निकल जाऊं। सारे प्राण संलग्न हो जाते हैं और जिस व्यक्ति के भीतर सारे प्राण संलग्न हो जाएं किसी प्यास से तो प्राप्ति निश्चित है। वह प्यास को पार कर जाएगा, उसका अतिक्रमण कर जाएगा।

एक फकीर था। उनका नाम था फरीद। एक नदी के किनारे, एक झोपड़े में रहता था। एक आदमी सुबह आया और उसने कहा—मुझे ईश्वर के दर्शन करने हैं। कई लोगों को फितूर पैदा हो जाता है ईश्वर के दर्शन करने का। कई लोगों को सनक चढ़ जाती है ईश्वर के दर्शन करने की। उस आदमी को भी चढ़ गई होगी। कई कारण हैं चढ़ जाने के। वह गया फरीद के पास और कहा कि मुझे ईश्वर के दर्शन करने हैं।

फरीद ने कहा—अभी तो मैं नदी में स्नान करने जाता हूं, तुम भी आओ। थोड़ा स्नान कर लो। फिर किनारे पर बैठकर तुम्हें बताऊंगा और यह भी हो सकता है कि मौका लग जाए तो नदी की धार में भी बता दूंगा। वह आदमी थोड़ा हैरान हुआ कि नदी की धार में क्या बताएगा? लेकिन फकीरों की बात है, हो सकता है कोई मतलब हो।

वह गया। दोनों स्नान करने उतरे और जैसे ही उस जिज्ञासु ने पानी में डुबकी लगाई, फरीद ने उसकी गर्दन पानी के नीचे दबा दी। उसके सिर को न उठने दिया। फरीद तगड़ा आदमी था। जिज्ञासु मुश्किल में पड़ गया। सारे प्राणपण से चेष्टा करने लगा, लेकिन फरीद दबाये चला जाता था, दबाये चला जाता था। लेकिन थोड़ी देर में फरीद ने पाया कि उसकी ताकत, खुद की ताकत, दबाने के वक्त कम पड़ गई है और वह उठने वाला आदमी पूरी ताकत से ऊपर उठ रहा है।

फरीद मजबूत था और जिज्ञासु दुबला-पतला और कमजोर आदमी था, लेकिन फरीद को उठाकर वह आदमी ऊपर निकल आया। फरीद ने उससे पूछा—मेरे मित्र! कुछ समझे?

तो उस आदमी ने कहा कि क्या खाक समझता? आप मेरी जान लिये लेते थे, मेरे प्राण लिये लेते थे। समझने की इसमें कहां बात थी? मैं किस पागल के पास आ गया? शक तो मुझे तभी हुआ था, जब आपने कहा कि मौका लगा तो नदी की धार में ही बता दूंगा। शक तो मुझे तभी हुआ था कि मैं गलत जगह आ गया, लेकिन एकदम जा भी नहीं सकता था तो आपके साथ चला आया। आप तो प्राण ही लिये ले

ते रहे। परमात्मा के दर्शन तो रहे दूर। अपने ही प्राण समाप्त हुए जाते थे। कौन द र्शन करता?

फरीद ने कहा—एक बात मैं तुमसे पूछूं? जब भीतर मैंने तुझे दबाया था तो कितने-कि तने विचार तुम्हारे मन में थे? तो उसने कहा—क्या मजाक करते हो? कोई विचा र नहीं था, एक ही खयाल था कि किस तरह एक सांस, हवा मिल जाए।

फरीद ने पूछा कि कितनी देर तक वह खयाल रहा?

उसने कहा—वह भी थोड़ी देर तक रहा। और जब सारे प्राण संकट में पड़ गये तो व ह खयाल भी मिट गया। फिर खयाल कोई भी न रहा। बस, एक अनजानी-अबूझ प्रे रणा थी, जो ऊपर उठा रही थी। कोई खयाल नहीं था, कोई विचार नहीं था। कुछ ऊपर उठ रहा था, भीतर से। सारे प्राण संलग्न थे। एक-एक कण संलग्न था। इसका कोई खयाल नहीं था। यह हो रहा था। इसका कोई खयाल नहीं था। इसका कोई वि चार नहीं था, इसका कोई 'आयडिया' नहीं था कि यह मैं करूं। यह कुछ भी नहीं था। यह हो रहा था। कोई प्राणों में जग गया था और ऊपर उठ रहा था। और ज ब मेरी सारी शक्ति इकट्ठी हो गई थी और जैसे ही मेरी सारी शक्ति इकट्ठी हुई, मैं ने पाया कि आप बहुत कमजोर हैं। आपके हाथ ढीले पड़ने लगे, मैं ऊपर आ गया।

फरीद ने कहा—जिस दिन ईश्वर की खोज में इतने ही

गहरे अज्ञान में डूबोगे, उतने ही गहरे जिस दिन प्यास में डूबोगे, उस दिन कोई ता कत तुम्हें रोक नहीं पाएगी। तुम पाओगे कि तुम अतिक्रमण कर गए। तुम पार कर गए हो उस सीमा को, जहां तुम मिट जाते हो और परमात्मा शुरू हो जाता है।

शास्त्रों से नहीं मिलता है ज्ञान! ज्ञान मिलता है प्राणों की समग्र भूख-प्यास से, इंटीग्रे टेड, जब सारे प्राण इकट्ठे हो जाते हैं किसी प्यास में तो ज्ञान उपलब्ध होता है। ज्ञान शास्त्र से सीखा गया उपक्रम नहीं है, बल्कि प्राणों की प्यास में और अभीप्सा में पा ई गई अनुभूति है। ज्ञान इसीलिए बाहर से उपलब्ध नहीं होता है, क्योंकि प्यास भीत र है और भीतर कोई प्यास बाहर के किसी पानी से नहीं बुझ सकेगी। और बाहर के पानी से जो बुझ जाती हो, जान लो कि यह प्यास भी बाहर की रही होगी। वह जो प्राणों की प्यास है, उस प्यास के ही इकट्ठे हो जाने में उसकी तृप्ति है।

लेकिन हम बाहर 'ज्ञान' खोजते हैं और उसको पकड़ लेते हैं और जब पकड़ लेते हैं तो द्वार बंद हो जाते हैं, खोज बंद हो जाती है, प्यास शिथिल हो जाती है, प्राण इ कट्ठे नहीं हो पाते और इस शिथिलता में इस दुर्बलता में इस खंड-खंड बंटे होने में ह म भटकते हैं। स्मरण कर-कर शब्द दोहराते हैं, जीते हैं, हल नहीं हो पाता। बंगाल में ऐसा ही हुआ है।

एक युवक अपने पिता के पास बैठा था। उसके पिता की उम्र साठ को पार कर गई थी। उसके पिता ने उस युवक को कहा कि हो सकता है कि मैं कुछ ही दिन का मेहमान और होऊं। लेकिन मैंने तुम्हें न तो कभी मंदिर जाते देखा, न कभी धर्म की पुस्तक पढ़ते देखा, न कभी सत्संग करते देखा। तो मैं तुम्हें अंत में यह कहूं कि तु म उस तरफ भी कुछ ध्यान दो।

उस युवक ने कहा—कुछ ध्यान? कैसी बातें करते हैं आप? परमात्मा भी कुछ ध्यान से पाया जा सकता है? कुछ ध्यान से? उसने फिर कहा—मैं तो जहां तक सोचता हूं वह यही कि कुछ ध्यान तो आपको देते हुए मैं रोज देखता हूं। रोज सुबह आप मंदिर जाते हैं! कुछ ध्यान मंदिर में देते हैं। शेष ध्यान दुनिया में देते हैं। और मुझे शक यह है कि जो तेईस घंटे दुनिया में रहता हो, वह एक घंटे मंदिर में कैसे रह सकता है?

और जो मंदिर की सीढ़ियों पर फिल्मी गाने गुनगुनाता हो, वह मंदिर में भजन कैसे गा सकता है? हो सकता है मंदिर के भीतर भजन ही गाता हो, लेकिन उनका मूल्य फिल्मी गाने से ज्यादा नहीं हो सकता, क्योंकि गुनगुनाने वाला वही है, जो सीढ़ियों के बाहर था। वही सीढ़ियों के भीतर भी है। सवाल गुनगुनाने वाले का है। सवाल यह नहीं है कि वह क्या गुनगुनाता है। आप क्या पढ़ते हैं यह सवाल नहीं है। आप क्या हैं, यह सवाल है। आप चाहे वेद-शास्त्र पढ़िए या कोकशास्त्र पढ़िए या चाहे कुछ और पढ़िए। आप, आप हैं, और आप पर ही निर्भर है सारी बात! किताबें वैसी ही हो जाएंगी जैसे आप हैं। जिस मंदिर में आप प्रवेश करेंगे, वह मंदिर आप जैसा हो जाएगा और जिस भगवान का हाथ पकड़ लेंगे, पाएंगे कि वह भगवान आप जैसा होगा, क्योंकि आप असली बात हैं।

तो उसने कहा अपने पिता से कि मैं देखता हूं इधर आपको। तीस वर्षों से ऊपर भी देखता हूं, लेकिन न तो आपकी प्रार्थनाओं में कोई अर्थ निकला और न आपकी पूजा में और न आपके किसी ध्यान में। उस लड़के ने आगे कहा कि कभी मैं भी स्मरण करूंगा, लेकिन एक ही बार स्मरण करूंगा, क्योंकि दो बार स्मरण करने का क्या फायदा? अगर एक बार स्मरण से नहीं होगा तो दूसरी बार स्मरण से क्या होगा? क्योंकि स्मरण करने वाला तो मैं ही रहूंगा और तीसरी बार करने से क्या होगा? हजार बार करने से क्या होगा? एक बार करूंगा। एक बार मंदिर जाऊंगा। एक बार परमात्मा के द्वार पर खड़ा होना है, लेकिन प्रतीक्षा में हूं मैं उस दिन की, जिस दिन मैं पूरे का पूरा खड़ा हो सकूं। जब तक अधूरा खड़ा होऊंगा, तब तक कुछ होने वाला नहीं है।

और बड़े रहस्य और आनंद की बात यह है कि आपका पूरा इकट्ठा हो जाना ही, आपकी तरफ परमात्मा की उपलब्धि है। और तो कोई परमात्मा है नहीं बाहर। आपका पूरा इकट्ठा हो जाना, आपका एक जुट हो जाना, आपके सारे प्राणों का समग्र हो जाना, खंड-खंड नहीं! डिसइंटिग्रेटेड नहीं, टूटा हुआ नहीं, इकट्ठा हो जाना। वही तो आपका जान लेना है और वह हो रहा है।

पिता कोई अस्सी वर्ष के हुए तो वे जीवित थे और उनका लड़का मंदिर तब तक नहीं गया था। साठ वर्ष का लड़का भी हो गया था और एक दिन उन लोगों ने देखा कि वह सुबह-सुबह मंदिर की तरफ जा रहा है। सारे लोग हैरान हो गए। वह जिंदगी भर का नास्तिक था। कभी मंदिर नहीं गया था और मंदिर जा रहा था। लेकिन वह मंदिर गया तो फिर वापस नहीं लौटा मंदिर से। और मंदिर में वह हाथ जोड़कर

खड़ा हुआ और सब समाप्त हो गया। सांस जो बाहर थी, वह बाहर रह गई, जो भी
तर थी, भीतर रह गई। उसके प्राण उड़ गए। उसके पास उसके खीसे में एक पत्र ि
लखा हुआ मिला। उसमें लिखा था—आज मैं उस अवस्था में हूं कि मेरी प्यास पूरी-पू
री जग गई है और मैं अपने अज्ञान से समग्ररूपेण दुखी हो गया हूं। और आज, जब
क आग मेरे चारों तरफ लगी है, शायद मैं बाहर निकल सकूं।

क्या किया उसने उस मंदिर में जाकर? खड़े होकर? और क्या उस करने का संबंध
उस मंदिर से है? क्योंकि मंदिर में तो वहां रोज खड़े होते थे जाकर। नहीं, उस मं
दर से, उस करने का कोई संबंध नहीं है। वह आदमी कहीं भी खड़ा होकर यह कर
ता तो हो जाता, जो उस मंदिर में हुआ है। उस बात के करने का संबंध उसके अप
ने भीतर से है। उसके प्राण किन्हीं कारणों से आकर इकट्ठे हो सके हैं किसी की प्या
स में। उस प्यास में कोई बात घटित हो सकती है। कोई क्रांति, कोई विस्फोट, कोई
एक्सप्लोजल हो सकता है।

धर्म एक एक्सप्लोजन है एक विस्फोट है। और केवल उन्हीं के भीतर होता है, जो
अपने अज्ञान की पूरी पीड़ा में जीते हैं और झूठे ज्ञान में उसको छिपाते नहीं हैं।
इसलिए मैंने कहा कि न ही किताब में, न ही शास्त्र, वेद और कुरान और बाइबिल,
न ही महावीर और बुद्ध के वचन में, किसी के भी वचन नहीं ले जा सकेंगे वहां,
जहां परमात्मा है। वहां तो ले जाएगी वह प्यास, जहां आप हैं। तो यह शब्द और श
ास्त्र इस प्यास को शिथिल न कर दें, इस प्यास को ढंक न दें, इस चिंगारी के ऊपर
राख न बन जाएं। बन गए हैं राख। इसलिए ज्ञानी मुश्किल से ही, यह तथाकथित
ज्ञानी मुश्किल से ही सत्य को जान पाते हैं। अब तक सुना तो नहीं कि किसी पंडित
ने सत्य जाना हो। अब तक ऐसा हुआ नहीं है और होगा भी नहीं।

तो पूछा है क्या यह सब व्यर्थ है? क्या इन सबको फेंक दें? अगर इनको फेंकने गए
तो उसका मतलब होगा कि इनमें कुछ-कुछ अर्थ है, तभी तो फेंकने गए। अगर इ
नमें आग लगाने गए तो उसका मतलब यह हुआ कि उससे भयभीत हैं, इसलिए आ
ग लगाने गए हैं। नहीं! दोनों स्थितियों में हम बाहर की चीज को बहुत मूल्य दे देते
हैं। या तो हम कहते हैं हम पूजा करेंगे या हम कहते हैं कि आग लगा देंगे। लेकि
न दोनों हालत में हम पूजा करें या आग लगाएं तो बाहर से ही बंधे रहते हैं।

नहीं, मैं यह नहीं कह रहा हूं कि पूजा मत करिए, आग लगा दीजिए, क्योंकि आग
लगाने वाला भी इस शास्त्र को मानने वाला है, तभी तो उसने इतनी मेहनत की है
कि आग लगाने जा रहा है। नहीं, आग लगाने का सवाल नहीं है और न पूजा कर
ने का सवाल है। सवाल इस सीधे सत्य को जानने का है कि क्या जो भी बाहर से
सीख लेता हूं, वह मेरा ज्ञान बन सकता है। नहीं, वह केवल मेरी स्मृति बनती है। '
मेमोरी' बनती है, ज्ञान नहीं, नालेज नहीं। स्मृति कितनी ही ज्यादा संग्रहीत हो जाए
वे उत्तर झूठे हैं। किसी ने कहा है कि अगर बचपन में हमें गीता और वेद और उ
पनिषद की कथाओं का बोध नहीं होता और हमारी मां ने और हमारे पिता ने हमें
शिक्षा न दी होती तो हम आपकी बात सुनने ही नहीं आते।

यह हो सकता था कि मेरी बात सुनने आप न आते। आने की कोई बड़ी जरूरत भी नहीं थी। लेकिन इन बातों को सीखकर अगर आप मेरी बात सुनने आए हैं तो एक बात का स्मरण रखना, सुनने के भ्रम होंगे, सुन नहीं पाएंगे, क्योंकि ये बातें बीच में आ जाएंगी और सुनने नहीं देंगी और यह भी खयाल में मत रखना। यह पूछा है प्रश्न—कि अगर हमने यह गीता और यह सब बातें न पढ़ी होतीं तो हमारे मन में ईश्वर का खयाल ही कैसे पैदा हो सकता था? कैसा पागलपन है?

अगर सारी किताबें नष्ट हो जाएं तो क्या आप सोचते हैं कि ईश्वर ही नष्ट हो जाएगा? अगर सारी दुनिया की किताबें जला दी जाएं, खाक कर दी जाएं तो क्या आप सोचते हैं कि दुनिया में वे लोग पैदा न होंगे जो ईश्वर की खोज करेंगे? तो ईश्वर फिर बड़ा कमजोर है कि किताबों पर निर्भर है। ईश्वर बड़ा कमजोर है। और तब तो यह ईश्वर बढ़ जाना चाहिए, क्योंकि प्रेस की ताकत बहुत बढ़ गई है। छपाई बहुत है। कोई पांच हजार किताबें हर सप्ताह छपती हैं तो दुनिया में थोड़े दिन में ईश्वर खूब बढ़ जाएगा।

लेकिन क्या आपको पता है कि जितनी किताबें बढ़ती हैं, उतना ही ईश्वर कम होता है? उलटा संबंध है दोनों के बीच कुछ। जगत में ईश्वर की खोज की प्रेरणा किताबों से नहीं हो सकती। ईश्वर की खोज की प्रेरणा तो जीवन के दुख से आती है, जीवन की पीड़ा से आती है, अशांति से आती है। जब तक हृदय में दुख है, पीड़ा है और अशांति है, तब तक ईश्वर की खोज पैदा होती रहेगी। चाहे शास्त्र रहें, चाहे जाएं। बल्कि शास्त्रों के कारण सस्ते संतोष मिल जाते हैं। अगर शास्त्र न हों तो सस्ते संतोष मिलने असंभव हो जाएंगे। तब तो आदमी को अपनी ही खोज करनी पड़ेगी और अपने ही श्रम से कुछ पाना पड़ेगा और उसी से कुछ संतोष मिल सकेगा। मेरा निवेदन है—आग लगाने की नहीं कहता हूं, क्योंकि आप जो पूजा करते हैं, अगर आप ने आग भी लगाई तो वह आपकी पूजा से भिन्न नहीं होगी। शास्त्र के साथ कुछ करने को नहीं कह रहा हूं। मेरी बात को गलत न समझ लेना। 'आपके साथ' कुछ करने को कह रहा हूं। सवाल गीता के साथ नहीं है, आपके साथ। कुरान और बाइबिल के साथ नहीं, आपके साथ है। आपका चित्त ऐसा होना चाहिए, जो शब्द से और शास्त्र से मुक्त हो, जो शब्द और शास्त्र से बंधा हुआ न हो, जो स्वतंत्र हो, क्योंकि स्वतंत्रता ही सत्य की खोज की पहली शर्त है।

एक-दो छोटे-छोटे गैर-गंभीर प्रश्न हैं। उनकी मैं भी बात कर लूं, फिर जो कुछ प्रश्न रह जाएंगे उनकी मैं परसों बात करूंगा। किसी ने मुझसे पूछा है—कल मैंने कहा कि एक बंदर ने मुझे कहा है कि आदमी का पतन बंदरों से हुआ है, यह विकास नहीं है तो उस व्यक्ति ने मुझसे पूछा है कि क्या बंदर भी बोलते हैं?

मैं यह निवेदन करना चाहूंगा कि बंदरों का बोलना तो बिलकुल स्वाभाविक है, न बोलना बहुत कठिन है। बंदर चुप रह ही नहीं सकते और जो चुप रह जाए और ऐसा बंदर अगर मिल जाए तो शक होगा कि कहीं यह आदमी तो नहीं है। चुप रह जाए! मौन, साइलेंस, असंभव है। बंदर तो खूब बोलते हैं। दूसरी बात है कि आपको

उनकी भाषा समझ में न आती हो, लेकिन जिन बंदरों की भाषा आपकी समझ में आती हो, उनको देखकर, उनकी बाबत भी आप समझ सकते हैं, जिनकी समझ में नहीं आता हो। मुझे किसी ने एक घटना बतायी थी, यह खयाल आ गई है।

एक गधा, आदमी की संगत में रहते-रहते बोलना सीख गया था। आदमी की संगत किसको नहीं बिगाड़ देती है। वह गधा भी बिगड़ गया। वह बोलना सीख गया। और जब वह बोलना सीख गया तो उसने पहला काम यह किया कि बाकी गधों को इक ट्ठा किया और उनका नेता हो गया। जो भी बोलना सीख सकता है, वह नेता हो ज ाएगा। फिर वह गधा हो, इससे क्या फर्क हो पड़ता है? वह गधा बोलना सीखा और बोलना सीखने के बाद जो दूसरी सीढ़ी थी, वह नेता हो गया। और स्वभावतः इस के बाद तीसरी पीढ़ी थी और उसने दिल्ली की यात्रा की।

उसने पहला काम—वह पुरानी बात है, वह पंडित नेहरू से मिलने चला। दरवाजे पर संतरी खड़ा था, लेकिन जैसे सभी संतरी सोये रहते हैं, वह संतरी भी सोया हुआ था। जैसा कि सभी पहरेदारों का काम है कि वह सोये रहते हैं। वह संतरी भी सोया हुआ था और फिर कोई आदमी जाता तो वह संतरी थोड़ा सचेष्ट होता। आदमी से डर होता। लेकिन एक गधा जा रहा था, उसने कोई फिक्र नहीं की। वह गधा बिना प्रवेश-पत्र के भीतर चला गया।

सुबह-सुबह का वक्त था और नेहरू अपनी बगिया में घूम रहे थे। वह गधा पीछे गय ा उनके और नेहरू तो बड़ी तेज चाल से घूम रहे थे, चल क्या रहे थे, दौड़ना ही थ ा करीब-करीब, गधा भी किसी तरह हांफता हुआ पीछे गया और उसने कहा—पंडित जी! नेहरू बहुत घबराये, क्योंकि वे भूत-प्रेत में विश्वास नहीं करते थे। वहां कोई आदमी दिखाई नहीं पड़ता था जो बोलता हो। उन्होंने चारों तरफ गौर से देखा। वहां कोई दिखाई न पड़ा! सिर्फ एक गधा खड़ा हुआ था। उन्होंने बहुत जोर से कहा—क ौन है? मेरे सामने आए? मैं भूत-प्रेत में विश्वास करने वाला नहीं हूं! जो भी हो, सामने आओ। उस गधे ने कहा—माफ करे, मैं तो सामने खड़ा हूं। सिर्फ एक ही भूल मेरी है कि मैं जरा बोलता हूं। आप नाराज तो नहीं होंगे?

नेहरू ने कहा—तू बिलकुल बेफिक्र रह। मैं बोलते हुए गधों से इतना ज्यादा रोज-रोज परिचित हूं कि तू बिलकुल फिक्र मत कर। तू बोल। गधे ने कहा—मैं तो डरता था कि पता नहीं, आप मुझसे मिलना पसंद करेंगे या नहीं! नेहरू ने कहा कि यहां गध ों के सिवाय मिलने और आता कौन है?

फिर पता नहीं, उन दोनों में क्या बातें हुई। वह तो मुझे पता नहीं। बात जरूर कोई कुछ गुप्त रूप से ही हुई होगी, क्योंकि इसे किसी अखबार ने अब तक छापा नहीं। कोई सीक्रेसी, कोई कांफीडेंशियल बात होगी। किसी अखबार ने छापी नहीं अब तक ।

लेकिन आदमी इस भ्रम में न रहे कि वही बोलना जानता है। बोलते तो सभी हैं। अ ादमी ही अकेला समर्थ है जो कि न बोलने की स्थिति को उपलब्ध हो सकता है। अ केला आदमी समर्थ है। न बोलने की स्थिति हो। नानस्पीकिंग की स्थिति को उपलब्ध

हो सकता है। उसी अबोल, उसी शांत स्थिति से वह द्वार खुलता है जो परमात्मा का है। यह तो मैंने बंदर की बात मजाक में कही थी और अगर आप मजाक भी न हीं समझ पाए तो धर्म क्या समझ पाएंगे? बड़ी मुश्किल हो जाएगी। लोग इतने गंभी र हो गए हैं दुनिया में कि मजाक भी नहीं समझ पाते, वे परमात्मा को क्या समझ पाएंगे? बहुत कठिन है।

यह जो थोड़ी-सी बात मैंने अभी आपको कही है तथा कल और परसों जो बातें कहूं गा, यह इस खयाल से नहीं कि मैं आपको कोई ज्ञान दे रहा हूं। इस भ्रम में बिलकु ल नहीं रहना। यह खयाल हो तो आना ही मत कि मुझसे कोई ज्ञान मिल सकता है । नहीं, मेरी सारी कोशिश इस बात के लिए नहीं है कि आपको कुछ
ज्ञान दूं, बल्कि इस बात के लिए है कि जो ज्ञान का भ्रम आपको है उसको तोड़ दूं। परमात्मा करे आपका झूठा ज्ञान टूट जाए और इस अज्ञान को आप जान सकें, उस ओरिजिनल इग्नोरेंस को, जो कि है। उस मौलिक अज्ञान को, जो कि भीतर तो शा यद उस अज्ञान में वह पीड़ा, वह ताप, वह घबराहट पैदा हो, वह संताप, वह एंग्वि श पैदा हो। प्राण इतने तड़फड़ा जाएं कि उस तड़फड़ाहट से आपके जीवन में क्रांति हो जाए। उसी अज्ञान के लिए चार दिन कोशिश करूंगा।

मैं तो अज्ञान सिखाता हूं। इसलिए मेरी बातें अगर ठीक न लगती हों तो काई हैरान होने की बात नहीं, क्योंकि अज्ञान सिखाने वाला ठीक नहीं लग सकता। ज्ञान सिखा ने वाला ठीक लग सकता है, क्योंकि उससे आप कुछ सीखकर लौटते हैं। अज्ञान सि खाने वाला तो आपसे कुछ और छीन लेता है। आप घर जाते हैं तो कुछ खोकर जा ते हैं। परमात्मा करे कि किसी दिन आप घर ऐसे जाएं कि आप सब खोकर चले ज ाएं तो शायद उसी दिन घर पहुंचने पर आपको जो मिले, वह परमात्मा हो।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना है। उससे बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। सब के भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

ज्ञान की पहली किरण

आज की चर्चा मैं एक छोटी-सी घटना से प्रारंभ करूंगा। एक सराय में मुझे ठहरना था। सराय में बहुत-से लोग ठहरे थे, जगह भी न थी। फिर भी मुझे एक कमरा मि ल गया। आधी रात गए, वहां मैं आ गया।

हमेशा ही सभी सरायों में ऐसे मेहमान आ जाते हैं। इसलिए कोई जगह नहीं होती, लेकिन फिर जगह बनानी पड़ती है। मैं जिस कमरे में था, उस कमरे में ही नए मे हमान को, लाकर ठहरा दिया गया था। कमरा छोटा था और मेहमान ज्यादा हो गए । लेकिन देख कर मैं हैरान हो गया। आधी रात हो गई थी, वह थका हुआ मेहमान , अपनी पगड़ी भी उसने अलग नहीं की, अपने जूते भी नहीं खोले और बिस्तर पर लेट गया, फिर वह करवटें बदलने लगा। फिर भी उसे नींद आने की संभावना मुझे नहीं दिखाई पड़ी तो मैंने उससे पूछा—मित्र! क्या उचित नहीं होगा कि तुम अपने क पड़े उतार दो पगड़ी और जूते अलग कर दो, ताकि आराम से सो सको?

वह बोला—सोचता तो मैं भी था कि कपड़े अलग कर दूं, लेकिन एक खतरा है। खत
रा यह है कि मैं स्वभाव से बहुत भुलक्कड़ हूं। कपड़ों के कारण मुझे याद रहती है ि
क मैं, मैं ही हूं। कपड़े मैंने अलग कर दिए तो सुबह कैसे तय करूंगा कि मैं कौन हूं
और आप कौन हैं? मेरी मुश्किल बिलकुल ही सच्ची थी। अगर आप सब के कपड़े
अलग कर दिए जाएं तो कौन किसको पहचान सकेगा? हम सभी लोग तो एक-दूस
रे को कपड़ों से पहचानते हैं। और इसीलिए तो कपड़े और कपड़े इकट्ठे किए जाने
की अपनी दौड़ है।

मैंने कहा कि बात तुम बिलकुल ही ठीक कहते हो। और मुझे एक घटना याद आ ग
ई। एक बहुत बड़े महाकवि को, एक बादशाह ने अपने घर भोजन पर निमंत्रित कि
या। वह गरीब था कवि। उसके मित्रों ने कहा—इन कपड़ों को पहन कर मत जाओ,
क्योंकि बादशाह से मिलना मुश्किल है। दरवाजे पर द्वारपाल ही तुम्हें वापस लौटा दें
गे। ये कपड़े इस योग्य नहीं कि तुम्हें कोई पहचाने। लेकिन कवि अपनी कविताओं में
भूला था और वह गया और जो होना था हुआ। द्वारपाल ने वापस लौटा दिया। उ
सने बहुत कहा कि मैं कौन हूं, मुझे जाने दो। लेकिन उन्होंने कहा—छोड़ो भी। ऐसे प
ागल यहां रोज आकर परेशान करते हैं। भाग जाओ।

वह लौट गया। उसके मित्रों ने कहा—मैंने पहले कहा था। दूसरे दिन उधार कपड़े पह
न कर वह गया। द्वारपाल, जिसने कल उसे हटा दिया था, उसने उसके पैर छुए औ
र कहा—महाराज भीतर आयें आप। कहां से पधारे हैं? बादशाह ने उसे अपने भोजन
-गृह में ले जाकर पूछा—कल मैं प्रतीक्षा करता रहा, आप आये नहीं? वह कुछ बोल
ा नहीं, मुस्कराता रहा।

भोजन की थाली लगा दी गई। उसने भोजन उठाया और अपने कपड़ों को कहा कि
मेरे कोट इसे खा लो, मेरी पगड़ी इसे खा लो। वह राजा बोला—आपका मस्तिष्क तो
ठीक है? कविता करते-करते पागल तो नहीं हो गए, जैसा कि अक्सर हो जाता है
? कविता करते-करते लोग पागल हो जाते हैं। या पागल कविता करने लगते हैं। व
ही तो नहीं हो गए? उसने कहा—नहीं, मैं तो कल भी आया था, लेकिन ये कपड़े मे
रे साथ नहीं थे। मैं बाहर से ही वापस लौटा दिया गया। जिन कपड़ों के कारण मैं
भीतर आया हूं, उन्हें सम्मान पहले न दें तो यह अशिष्टता होगी। तो मैंने उस मेहम
ान को यह कहा, बात तो तुम ठीक कहते हो।

दुनिया में सभी कपड़ों से पहचाने जाते हैं, दुनिया में तरह-तरह के कपड़े हैं। और उ
न्हीं से हम एक-दूसरे को पहचानते हैं। और यह भी तुम ठीक कहते हो कि दूसरे तु
म्हें कपड़ों से पहचानते हैं। हम खुद भी तो अपने ही को, अपने कपड़ों से पहचानते
हैं। अगर हम बिलकुल नग्न खड़े हो जाएं तो खुद को भी पहचानना गलत हो जाएग
ा कि मैं कौन हूं, क्योंकि हम अपने को भी दूसरों की मार्फत पहचानते हैं। कोई सी
धा अपने को नहीं पहचानता है। हम उसी भांति अपने को पहचानते हैं जिस तरह दू
सरे लोग अपने को पहचानते हैं। दूसरे लोगों की नजर से ही हम अपने को देखते हैं
। सीधे अपनी नजर से कौन अपने को देखता है? इसलिए, अगर कपड़े न होंगे तो

दूसरे तुम्हें न पहचान पाएंगे। तो यह भी तुम ठीक कहते हो कि तुम अपने को न प
हचान पाओगे।

तो उसने कहा इसी मुसीबत में मुझे नींद नहीं आ रही है। कमरे में अकेला होता तो
मैं कपड़े अलग करके सो जाता। मैं अभी कपड़े अलग कर दूंगा तो सुबह कैसे तय
होगा कि मैं कौन हूं और आप कौन हैं? मैंने कहा—मित्र! एक तरकीब है। हमसे पह
ले उस कमरे में जो ठहरे रहे, उनमें से कोई एक छोटा बच्चा अपना गुब्बारा खेलते
हुए छोड़ गया है और एक छोटी गुड़िया छोड़ गया है। तो मैंने उससे कहा कि ऐसा
करो कि गुब्बारे को मैं तुम्हारे पैर में बांध देता हूं और इस गुड़िया को तुम्हारे पा
स रखे देता हूं, ताकि पहचान रहे, आइडेंटिटी रहे कि तुम तुम्हीं हो। तो सुबह उठ
कर तुम अपने कपड़े पहन लेना। मैंने पूछा—तुम्हारा नाम क्या है? उसने कहा—मेरा
नाम? मेरा नाम मुल्ला नसरुद्दीन है। तो उसने कपड़े उतार दिए। मैंने उसके पैर में
गुब्बारा बांध दिया और उसके पास गुड़िया रख दी। वह निश्चिन्त होकर सो गया।
और जब उसकी घरघराहट की आवाज आने लगी तो मेरे मन में एक खयाल उठा।
और मैं उठा मैंने उसका गुब्बारा निकाल कर अपने पैर में बांध लिया और उसकी
गुड़िया उठाकर अपने बिस्तर पर रख ली। और जैसा होना था, वही हुआ।

कोई चार बजे वह चिल्लाया और कहा—देखिये जी! गड़बड़ होने वाली थी तो मालू
म होता है कि हो गई। वह उठा और मुझे हिलाया और कहा कि मुसीबत हो गई है
, उठिए। मैंने कहा—क्या हुआ? उसने कहा—मुसीबत यह हो गई कि गुब्बारा आपके
पैर में बंधा है और गुड़िया आपके बिस्तर पर है। तो अगर आप मुल्ला नसरुद्दीन हैं
तो मैं कौन हूं?

जैसे आप हंसे, वैसे मैं भी हंसा। लेकिन उस हंसी के लिए आज तक रोना पड़ रहा
है, क्योंकि मैं हंसा तो वह दरवाजा खोलकर बाहर निकल गया और चिल्लाने लगा
कि मैं कौन हूं? और मेरी समझ में आना मुश्किल हो गया। मैं उसके पीछे-पीछे गय
ा, लेकिन थोड़ी देर हो गई, क्योंकि मैं भी बिस्तर पर था और उठ कर मैंने कपड़े
पहने और तब तक वह आदमी दूर निकल गया। बाहर आया तो एक झाड़ के नीचे
से आवाज आ रही थी। कोई पूछ रहा था, मैं कौन हूं? तो मैं वहां गया और जो
आदमी पूछ रहा था कि मैं कौन हूं, उससे मैंने पूछा—क्या तुम मुल्ला नसरुद्दीन हो
? लेकिन उसे पता नहीं कि मैं कौन हूं।

तो मैं मुल्ला नसरुद्दीन के कपड़े साथ में लिए घूम रहा था। वह कहीं मिल जाए त
ो उसके कपड़े दे दूं। लेकिन आज तक उस आदमी का कहीं पता नहीं चल रहा है।
और जिस आदमी को भी गौर से देखता हूं तो वही आदमी पूछता हुआ मालूम पड़
ता है कि मैं कौन हूं। किसी को भी वह पता नहीं है। यह उस आदमी पर हम हंसे
और मैं भी हंसा था। लेकिन मुझे पता चला कि वह आदमी तो सब मनुष्यों का प्रति
निधि था, क्योंकि किसी भी आदमी को पता नहीं है कि वह कौन है? इस बात से
फर्क नहीं पड़ता है कि आपको पता है कि आपका नाम क्या है और आपका घर क
हां है। ये सब बिस्तर की बाबत बातचीत है। ये सब कपड़ों की है। आपका नाम बद

ला जा सकता है, पर आप नहीं बदलेंगे। और आपके कपड़े बदले जा सकते हैं, मक
ान भी बदला जा सकता है और आप नहीं बदलेंगे। आपका पद छीना जा सकता है।
आपकी धन-दौलत छीनी जा सकती है और आप सड़क के भिखारी हो सकते हैं, ि
फर भी आप नहीं बदलेंगे। आप बच्चे, जवान हो गए, बूढ़े हो गए, सब बदल गया,
फिर भी आप नहीं बदले।

वह कौन है भीतर, जो बिना बदले हुए मौजूद है। उसकी कोई पहचान है? उसका
कोई स्मरण, उसकी कोई रिमेम्बरिंग है? नहीं, उसकी कोई भी पहचान नहीं है। मनु
ष्य को यह भी पता नहीं कि वह क्या है? और ऐसा मनुष्य खोज करता है परमात्म
ा की, परमात्मा कैसे मिलेगा? ऐसा मनुष्य खोज करता है सत्य की, सत्य कैसे मिले
गा?

परमात्मा को जानने के पहले, स्वयं को जानना जरूरी है। और सत्य को जानने के
पहले, स्वयं को पहचानना जरूरी है, क्योंकि जो मेरे निकटतम हैं, अगर वही अपरि
चत हैं तो जो दूरतम है, वह कैसे परिचित हो सकेगा? तो इसके पहले कि किसी
मंदिर में परमात्मा को खोजने जाएं, इसके पहले कि किसी सत्य की तलाश में शास्
त्रों में भटकें, उस व्यक्ति का मत भूल जाना जो कि आप हैं। पहले और सबसे पह
ले और सबसे प्रथम, उससे परिचित होना होगा जो कि आप हैं।

लेकिन कोई स्वयं से परिचित होने को उत्सुक नहीं। सभी लोग दूसरों से परिचित हो
ना चाहते हैं। दूसरे से जो परिचय है, वही विज्ञान है और स्वयं से जो परिचय है,
वही धर्म है। तो दूसरे से जो परिचय है वही साइंस है, खुद से जो परिचय है, वही
रिलीजन है। जो स्वयं को जान लेता है, बड़े आश्चर्य की बात है, वह दूसरे को भी
जान लेता है। और जो दूसरे जानने में समय व्यतीत करता है और भी बड़े आश्चर्य
की बात है, वह दूसरे को तो जान ही नहीं पाता, धीरे-धीरे स्वयं को जानने के द्वा
र भी उसके बंद हो जाते हैं।

ज्ञान की पहली किरण स्वयं से प्रकट होती है और धीरे-धीरे सर्व पर फैल जाती है।
ज्ञान की पहली ज्योति स्वयं में जलती है और फिर समस्त जीवन में उसका प्रकाश
, उसका आलोक दिखाई पड़ने लगता है।

मैंने पहले दिन कहा कि ईश्वर मर गया है। ईश्वर इसलिए मर गया है कि कोई स्व
यं को जान ले। जो भी स्वयं को जान लेता है, उसके लिए ईश्वर पुनरुज्जीवित हो
जाता है। और जो स्वयं को जान लेता है, उसके लिए ईश्वर पुनरुज्जीवित हो जाता
है। और जो स्वयं को नहीं जानता है, उसके लिए ईश्वर मृत है। चाहे वह कितनी
ही पूजा करे और कितनी ही अर्चनाएं करे और मंदिर बनाए, मूर्तियां बनाए और कु
छ भी करे। एक काम अगर उसने छोड़ रखा है, स्वयं को जानने का तो जान लें ठी
क से कि परमात्मा से उसका कोई संबंध कभी नहीं हो सकेगा।

परमात्मा से संबंध की पहली बुनियादी आधारभूत शर्त है, स्वयं से संबंधित हो जाना
। कैसे कोई स्वयं से संबंधित हो सकता है, उसकी ही आज बात करूंगा, क्योंकि वह
ी सूत्र है, वही सेतु है, वही मार्ग है, वही द्वार है, परमात्मा से संबंधित होने का। अ

ौर तब जो परमात्मा प्रगट होता है, वह मनुष्य द्वारा निर्मित परमात्मा की कल्पना नहीं है, बल्कि वही है, जो है। तब वह हिंदू का परमात्मा नहीं है और मुस्लिम का परमात्मा नहीं है,जैन का और ईसाई का नहीं है, तब वह बस, परमात्मा है। उसका कोई रूप नहीं, नाम नहीं, उसका आदि नहीं, अंत नहीं। फिर उसकी कोई सीमा न हीं है।

वैसा जो सत्य है, जो हमें सब तरफ घेरे हुए है, कैसे दिखाई पड़ेगा? और यदि हम स्वयं को जानें, उसे देखने की दौड़ में पड़ गए तो वह दौड़ शुरू से ही भ्रांत है। औ र हम जो भी जान लेंगे उस भांति वह हमारे अज्ञान को और गहन करेगा और महा न बनाएगा।

एक अंधा आदमी अपने एक मित्र के घर मेहमान था। मित्र ने उसके स्वागत में बहु त-बहुत मिष्ठान्न बनाए। उस अंधे को कुछ पसंद आए। उसने पूछा यह क्या है? दूध से बनी कोई मिठाई थी। उसके मित्र ने कहा—दूध से बनी मिठाई। उस अंधे आदमी ने कहा—क्या तुम कृपा करोगे और दूध के संबंध में मुझे कुछ समझाओगे? मुझे कु छ बताओगे कि यह दूध कैसा होता है? तो मित्र ने वही किया जो तथाकथित ज्ञानी हमेशा से करते रहते हैं। वे उसको समझाने लग गए। एक मित्र ने कहा—दूध होता है शुद्ध सफेद। बगुले की पंखों की भांति, वह अंधा आदमी बोला—मजाक करते हैं मुझसे आप? मैं तो दूध ही नहीं समझ पा रहा। यह बगुला और उसके पंख! एक अ ौर कठिनाई हो गई। क्या मुझे बतायेंगे कि यह बगुला और उसके पंख! एक और क ठिनाई हो गई। क्या मुझे बतायेंगे कि यह बगुला और उसके सफेद पंख कैसे होते हैं ? मैं पहले बगुले को समझूं तो दूध को समझ पाऊंगा!

पहली समस्या तो वहीं रह गई, यह दूसरा प्रश्न खड़ा हो गया कि ये बगुले के सफेद पंख कैसे होते हैं, ये बगुला कैसा होता है। मित्र अचरज में पड़ गए।

एक मित्र ने तरकीब निकाली। उसने अपना हाथ उठाया। अंधे का हाथ पकड़ा और अपने हाथ पर रखकर कहा कि हाथ फिराओ और कहा कि जिस तरह मेरा हाथ थ ोड़ा मुड़ा हुआ है, उसी तरह बगुले की गर्दन मुड़ी हुई होती है। उस अंधे आदमी ने मुड़े हुए हाथों पर हाथ फेरा। वह उठकर नाचने लगा और बोला कि मैं समझ गया । मुड़े हुए हाथ की भांति दूध होता है। समझ गया कि दूध मुड़े हुए हाथ की भांति होता है। वे मित्र बहुत परेशान हो गए। इससे तो बेहतर था कि वे अंधे आदमी को न समझाते, क्योंकि यह जानना ही अच्छा था कि नहीं जानते हैं। यह जानना तो और खतरनाक हो गया कि दूध मुड़े हाथ की भांति होता है।

जिन्होंने स्वयं की आंखें खोलकर नहीं देखा, उनके हाथों में शास्त्रों की यही गति हो जाती है, सिद्धांतों की यही गति हो जाती है। परमात्मा कैसा होता है? वह मुड़े हा थ की भांति जैसे दूध होता है, ऐसे परमात्माओं की समझ में पकड़ जाता है। वैसे गलत परमात्मा की मृत्यु हो गई है। इसी पर मैं आपसे बात कर रहा हूं। और अच छा हुआ है। और उसकी मृत्यु से भी एक नयी सूचना आपको देता हूं। उसकी मृत्यु इसलिए हुई है कि हमारी आंखें बंद हैं। हम अंधे हैं। इसलिए परमात्मा को मरना

पड़ा है। हमारे अंधेपन ने उसकी हत्या कर दी! क्या हम आंखें खोलने को राजी हैं? जिनको प्रेम है जीवन से, सत्य से, वे आंखें खोलने को राजी हों तो सारे जगत में परमात्मा का आलोक प्रकाशित हो सकता है। वे आंखें कैसे खुलेंगी, स्वयं के द्वार जो बंद हैं। उन्हें कैसे खोलेंगे, उनके कुछ सूत्र आज की संध्या मैं आपसे कहूंगा।

पहला सूत्र है, जैसा मैंने कहा, ज्ञान नहीं बल्कि अज्ञान। एक्सैप्टेड नाट नोइंग। एक ऐसे चित्त की दशा, जहां हम स्पष्ट रूप से जानते हैं कि मैं कुछ भी नहीं जान रहा हूं, मुझे कुछ भी पता नहीं है। ऐसे अबोध अज्ञान की स्पष्ट स्वीकृति पहला सूत्र है तो ज्ञान को छोड़ना पड़ेगा। मनुष्य के मन पर ज्ञान बहुत बोझिल है। पत्थरों और पहाडों की भांति, उसकी छाती पर ज्ञान सवार है। हम सब कुछ जानते हुए मालूम होते हैं। जबकि हम कुछ भी नहीं जानते हैं।पति अपनी पत्नी को भी नहीं जानता है। पिता अपने पुत्र को भी नहीं जानता है। इतना रहस्यपूर्ण है यह शब्द। आपके द्वार पर जो पत्थर पड़ा है, उसे भी आप नहीं जानते हैं। आपके आंगन में जो फूल खिलते हैं, उनको भी नहीं जानते! कुछ भी तो हम नहीं जानते हैं। जीवन में इतना अननोन इतना मिस्टीरियस इतना रहस्य भरा हुआ है। लेकिन हमारा अहंकार कहता है कि हम कुछ जानते हैं। पिता का अहंकार कहता है कि तुम मेरे लड़के हो। मैं तुम्हें भली-भांति जानता हूं।

बुद्ध बारह वर्ष के बाद अपने गांव वापस लौटे तो सारा गांव उन्हें लेने गया। पिता भी लेने गए, लेकिन पिता तो बारह वर्ष पहले के क्रोध से भरे हुए थे कि लड़का छोड कर भाग गया था।

उन्होंने जाते ही गौतम बुद्ध को कहा--सुनो! मैं तुम्हारा पिता हूं और तुम्हें अभी भी क्षमा कर सकता हूं। वापस लौट आओ अपने घर और क्षमा मांग लो कि तुमने भूल की है।

बुद्ध ने क्या कहा? बुद्ध ने कहा कि आप भूल करते हैं। मुझे आप जानते हैं, यह गलती करते हैं। स्वयं को भी जानते हों, यह भी संदिग्ध है तो मुझे कैसे जान सकेंगे? क्या मैं आपका पुत्र हूं, इससे आप मुझे जान गए? तो भी आप भूल करते हैं। मैं आपके द्वारा पैदा हुआ हूं, लेकिन आप से पैदा नहीं हुआ हूं। आप मेरे लिए रास्ता थे दुनिया में आने के लिए। मेरे बनाने वाले नहीं हैं। आप मार्ग थे, इससे ज्यादा नहीं। अभी मैं जिस चौरस्ते से होकर आया हूं, वह लौटते वक्त खड़ा होकर कहे कि ठहरो! मैं तुम्हें भली-भांति जानता हूं, क्योंकि थोड़ी देर पहले तुम मेरे पास से गुजरे थे। ऐसे ही एक पिता अपने बच्चे से कहता है कि मैं तुम्हें भली-भांति जानता हूं। ऐसी वह गलती कर रहा है। एक चौरस्ता था पिता, जिससे बच्चा गुजरा और दुनिया में आया।

लेकिन जानना और इस जानने के भ्रम में जो मिस्ट्री थी, वह जो रहस्य था जीवन का, उससे वह अपरिचित रह गया। हम सभी चीजों को जानते हुए मालूम पड़ते हैं। यह जानने का भ्रम छूटना चाहिए तो ही जीवन में रहस्य का जन्म होता है। तो ही अननोन और अज्ञात के प्रति आंखें खुलनी शुरू होती हैं। ज्ञात के तट से जो मुक्त

नहीं होता है, अज्ञात सागर की यात्रा उसके लिए नहीं है। और परमात्मा तो बिलकु ल अज्ञात है। और हम स्वयं बिलकुल अज्ञात हैं और हमारे भीतर क्या है, हम नहीं जानते तो जो हम जानते हैं, उसी को अगर हम पकड़े रहें तो इस अज्ञात में यात्रा नहीं हो सकेगी।

एक छोटी-सी घटना कहूं, उससे शायद मेरी बात समझ में आ जाए। एक रात, एक गांव में ऐसा हुआ जैसा कि हर रात प्रायः सभी गांवों में होता है कि कुछ जवान लड़के एक शराब-गृह में गए और शराब पीकर बेहोश हो गए। जैसा कि हर रात ह र गांव में होता है, उस गांव में भी हुआ। लड़के बेहोश हो गए शराब पीकर। बाहर निकले मधुशाला से तो आकाश में चांद था। पूर्णिमा की रात थी। उन्होंने कहा कि बहुत अच्छी रात है। चलो, झील पर चलें।

वे झील पर गए। एक नाव में सवार हुए। पतवारें उठायी और उन्होंने यात्रा शुरू क र दी। रात बीत गई। वे रात भर पतवार चलाते रहे। नाव को खेते रहे, खेते रहे। और सुबह जब ठंडी हवाएं आने लगीं तो उनका नशा कुछ उतरा। तब उनमें से कि सी ने कहा, न मालूम कितनी दूर निकल आए,? न मालूम किस दिशा में? अब तो सुबह भी होने के करीब आ गई है। पता लगाओ कि हम कहां आ गए हैं। वापस लौट कर चलें। गांव के लोग जाग चुके होंगे।

उनमें से दो लोग किनारे से नीचे उतरे और हैरानी से चिल्ला उठे और कहा–घबरा ओ मत, नीचे उतर आओ? हम वहीं खड़े हैं, जहां रात खड़े थे। वे नीचे उतर कर बहुत हैरान हुए। जंजीर रात को खोलना भूल गए थे। नाव वहीं बंधी थी। वे पतव ार चलाते रहे, चलाते रहे। रातभर का श्रम व्यर्थ गया। श्रम तो बहुत किया, यात्रा तो बहुत की, लेकिन जहां थे वहीं रहे। कहीं गए नहीं।

अधिकतर लोग, जब मौत की ठंडी हवाएं आती हैं और जीवन का नशा उखड़ता है तो पाते हैं कि किनारे पर ही नाव बंधी है। जहां से यात्रा शुरू होती थी, वहीं खड़े हैं। क्योंकि किनारे से जंजीर छोड़ना भूल गए।

यह जो हमारे ज्ञान का कारण है, यह जो हम जानते हैं, उसी से हम बंधे हैं। किसी ने एक शास्त्र पढ़ लिया। गीता या कुरान या बाइबिल या कुछ और। किसी ने कुछ और सुन लिया, किसी ने कुछ और अनुभव कर लिया, वह उससे ही बंधा है।

जो ज्ञान से बंधता है, वह अतीत से बंध जाता है, क्योंकि ज्ञान हमेशा बीते हुए का हो गया है। वह 'पास्ट' है, बीत गया है। जो आप ने जान लिया, वह अतीत हो ग या है। जो जान लिया, वह गया। वह मुर्दा हो गया, वह मर गया। उस मरे हुए के साथ जो बंधा रहता है, उसकी भविष्य में यात्रा कैसे हो सकेगी? वह आगे कैसे जा एगा? ज्ञान तो हमेशा बीता हुआ है। जो भी आपने जान लिया, वह गया।

और परमात्मा है अनजाना, अननोन। तो इस जाने हुए से अगर हम बंध गए तो उ स अनजाने को कैसे जान सकेंगे? इसलिए अज्ञान की गठरी जो उतार देता है, वही उस अज्ञात के सागर में यात्रा कर पाता है, जो कि परमात्मा का है, जो ईश्वर का है।

पहला सूत्र है—ज्ञान से मुक्त हो जाना।
लेकिन हम सब तो ज्ञान की तलाश में हैं। हम सब तो इस खोज में हैं कि ज्ञान कहां मिल जाए। भगवान न करे कि आपको कहीं ज्ञान मिल जाए। ज्ञान मिला कि आप वहीं बंद हो जाएंगे, वहीं ठहर जाएंगे, रुक जाएंगे। तो जो ज्ञानी हो जाते हैं, वहीं ठहर जाते हैं और मुर्दा हो जाते हैं। पंडित से ज्यादा मरा हुआ कोई आदमी कभी देखा है? इतना डेड? नहीं, मुश्किल है, बिलकुल मुश्किल है, एकदम कठिन है। दुनिया में जितना पांडित्य बढ़ता है, उतना मुर्दापन बढ़ता है।
क्यों? क्योंकि वे अपने जानने से, अपने ज्ञान से बंध जाते हैं। वह बंधन, उनके चित्त को फिर उड़ान नहीं लेने देता है। अनंत सागर की, आकाश की, परमात्मा की उड़ान में जाने में वे असमर्थ हो जाते हैं। उनके पैर जमीन से बंध जाते हैं। ज्ञान से मुक्त होने का साहस, ज्ञान से मुक्त होने का साहस ही किसी व्यक्ति को धार्मिक बनाता है। फिर ज्ञान से मुक्त होने का साहस?
पहला सूत्र है—ज्ञान के तट पर अपनी जंजीरें तोड़ दीजिए। बड़ी घबराहट लगेगी। धन छोड़ देना बहुत आसान है, लेकिन ज्ञान छोड़ना बहुत कठिन है। इसलिए जो लोग धन छोड़कर भाग जाते हैं, वे लोग ज्ञान नहीं छोड़ते, धन छोड़कर भाग जाते हैं। लेकिन उसी धन से जो किताबें खरीदते हैं, उनका बस्ता बांध कर साथ ले जाते हैं। वे ज्ञान नहीं छोड़ते। एक आदमी संन्यासी हो जाता है, घर छोड़ देता है, परिवार छोड़ देता है, पत्नी और बच्चों को छोड़ देता है। लेकिन हिंदू होने को नहीं छोड़ता है, मुसलमान होने को नहीं छोड़ता है, जैन होने को नहीं छोड़ता है। कैसी अदभुत और आश्चर्य की बात है कि अब तक जमीन पर 'साधु' पैदा नहीं होते! हिंदू साधु होता है, मुसलमान साधु होता है, ईसाई साधु होता है। यह क्या पागलपन की बात है। साधु होना चाहिए जमीन पर।
हिंदू, ईसाई और मुसलमान, ये नाम साधु के पीछे कैसे लगे हैं? असाधु के साथ ये बीमारियां लगी रहें, समझ में आता है। साधु के साथ इन बीमारियों को देखकर बहुत हैरानी होती है, बहुत आश्चर्य होता है। लेकिन ज्ञान जो पकड़ लिए गए हैं, हिंदू का, मुसलमान का, जैन का, वे छूटते नहीं, उसे छोड़ना क्यों नहीं चाहते?
वह भी एक आंतरिक संपदा है, इसलिए वह भी एक धन है। रुपया बाहर की संपत्ति है, ज्ञान भीतर की संपत्ति है। बाहर की संपत्ति छोड़ना बहुत कठिन नहीं है। भीतर की संपत्ति जो छोड़ता है, वही केवल परमात्मा से संबद्ध होता है। क्राइस्ट ने कहा है कि 'ब्लैस्ड आर द पुअर'। धन्य हैं वे जो दरिद्र हैं। किनके पास? उनके पास, जिनके पास लंगोटी नहीं है। अगर वे ही धन्य हैं तो क्राइस्टस ने बहुत गलत बात कही है। तो उसका मतलब यह हुआ कि वह गरीबी, दीनता और दरिद्रता के समर्थन में नहीं है।
क्राइस्ट ने कहा है कि 'पुअर इन स्प्रिट।' जो आत्मा से दरिद्र हैं। क्या मतलब? आत्मा से दरिद्र का मतलब वे, जिन्होंने ज्ञान की संपदा को फेंक दिया और जिन्होंने कहा कि हमारे पास भीतर कोई संपदा नहीं है। जानने वाली। हम कुछ भी नहीं जानते,

हम बिलकुल अज्ञान में हैं। अपने को बांध नहीं रखा है। धन्य हैं वे लोग, जो दरिद्र हैं आत्मा में।

आत्मा की दरिद्रता का मतलब? आत्मा की दरिद्रता का मतलब है, जिन्होंने ज्ञान की संपत्ति को छोड़ दिया है वे ही लोग? केवल वे ही थोड़े से लोग सत्य को, परमात्मा को जान सकते हैं।

तो क्या तैयारी है इस बात की कि आप ज्ञान को छोड़ दें? धन को छोड़ने की तैयारी करने वाले लोग गलत साबित हुए हैं। धन छोड़ने का कोई सवाल नहीं है बड़ा। धन बाहर है। अगर उसे छोड़ दीजिए आप तो जो उपलब्धि होगी वह भीतर की होगी। और स्मरण रखिए, दुनिया में केवल दो ही सिक्के है—धन के और ज्ञान के। और दो ही तरह के लोग हैं धन को इकट्ठा करने वाले लोग और ज्ञान को इकट्ठा करने वाले लोग।

एक बादशाह समुद्र के किनारे अपने महल में निवास करता था। एक सांझ वह खड़ा हुआ था छत पर। सैंकड़ों जहाज आते थे और जाते थे समुद्र में। उसने अपने वजीर को कहा—देखते हो सैंकड़ों जहाज आ रहे हैं और जा रहे हैं। उसके वजीर ने कहा—पहले मुझे भी सैंकड़ों दिखाई पड़ते थे। कुछ दिन से मुझे केवल दो जहाज दिखाई पड़ रहे हैं। उस राजा ने कहा—दिमाग खराब हो गया है? दो जहाज दिखाई पड़ते हैं? सैंकड़ों आ रहे हैं, जा रहे हैं। उसके वजीर ने कहा। हो सकता है कि मुझे गलत दिखाई पड़ता हो, लेकिन फिर भी मुझे दो ही जहाज दिखाई पड़ते हैं। एक तो धन का जहाज है और एक ज्ञान का जहाज है। और इन दो जहाजों की सारी यात्रा है। या तो कोई धन खोजने जा रहा है या कोई ज्ञान खोजने।

धन से भी अहंकार तृप्त होता है। धन है मेरे पास। धन की खोज से तृप्ति होती है। मैं कुछ हूं, समबडी, कोई हूं। आइडेंटिटी मिल जाती है। कपड़ा मिल जाता है धन से। भूल जाते हैं हम कि मैं अपने को नहीं जानता। धन है मेरे पास, मैं कुछ हूं। जरा किसी धनी को धक्का दें तो कहेगा, जानते नहीं कि मैं कौन हूं? लेकिन अगर उसका धन छिन जाएगा तो फिर वह यह नहीं कहेगा कि जानते नहीं कि मैं कौन हूं? धन था तो वह कुछ था।

एक आदमी मंत्री है तो वह कुछ है। वह मंत्री न रह जाए, जैसा कि रोज होता है, कोई मंत्री है तो 'नहीं,' रह जाता है, भूतपूर्व मंत्री रह जाता है। मर गया। वह मंत्री अब नहीं रह गया। जैसे कपड़े की क्रीज निकल जाए, वैसा आदमी हो जाता है। बिलकुल ढीला-ढाला। उसको धक्का दो, वह बिलकुल नहीं कहता कि मैं कौन हूं। बल्कि वह कहेगा कि कहीं आपको चोट तो नहीं लग गई। लेकिन कल वह अगर मंत्री था और आप पास से निकल जाते धक्का देकर, आपकी छाया का भी धक्का लग जाता है तो कहता कि ठहरो, जानते नहीं कि मैं कौन हूं?

तो धन, पद, अनुभव यह भाव देता है कि मैं कौन हूं। इस 'मैं कुछ हूं' के भ्रम में वह यह खयाल ही भूल जाता है कि मैं यह नहीं जानता कि मैं कौन हूं। 'कुछ' के भ्रम में 'मैं कौन हूं,' इस बात का स्मरण नहीं रह जाता।

एक और खोज है ज्ञान की। ज्ञानी को भी दंभ पैदा हो जाता है कि मैं कुछ हूं। और ज्ञानी धनी से कहीं ज्यादा दंभी होता है, क्योंकि वह यह कहता है कि यह धन तो बाहर की संपत्ति है। यह तो भौतिकवादी मैटिरियलिस्ट है! हम, हम तो अध्यात्मवादी हैं, हम तो ज्ञान के खोजी हैं। धन, यह तो क्षुद्रवाद है। लेकिन इस ज्ञान को भी क्या हो रहा है? ज्ञान से भी अहंकार मजबूत हो रहा है कि 'मैं कुछ हूं'। ज्ञानियों की आंखों में देखिए, उनके आस-पास ढूंढिए और खोजिए, वहां शांति नहीं मिलेगी, मिलेगा अहंकार। नहीं तो ज्ञानी शास्त्रार्थ करते घूमते? और एक-दूसरे को हराते और पराजित करते?

जहां किसी को हराने का भाव आता है, वहां सिवाय अहंकार के और क्या होगा? क्या ज्ञानी शास्त्र लिखते, दूसरे शास्त्रों के खंडन, निंदा, गाली-गलौज में? अगर इन ज्ञानियों के शास्त्र देखें तो बहुत हैरान हो जाएंगे। जितनी गाली-गलौज की जा सकती है वह सब वहां मौजूद है। जितना भी मनुष्य के मन में, दूसरे मनुष्य के प्रति हिंसा, घृणा और क्रोध हो सकता है, वह सब वहां मौजूद है। यह क्या है? इन ज्ञानियों ने खुद भी लड़ा और दुनिया को भी लड़ाया और ऐसी दीवाल खड़ी कर दी जिसको तोड़ना मुश्किल हुआ जा रहा है। ये दीवालें सब अहंकार की दीवालें हैं और ये ज्ञानी अगर धन को छोड़ भी दें तो छोड़ने से कोई फर्क नहीं पड़ता है। अहंकार फिर भी तृप्त होता है।

एक साधु ने मुझसे कहा—मैंने लाखों रुपये पर लात मार दी। एक बार कहा, दो बार कहा, तीन बार कहा। तो मैंने उनसे पूछा कि लात कब मारी थी? वह बोले—कोई बीस-पच्चीस वर्ष हुए। मैंने उनसे कहा—अगर बुरा न मानें तो मैं यह कहना चाहूंगा कि ये लात ठीक से लग नहीं पाई। उन्होंने कहा—क्यों? मैंने पूछा—बीस-पच्चीस वर्ष पहले जो लात मारी, उसकी अब तक याद क्यों है? उसकी स्मृति क्यों हैं? वह लग नहीं पाई होगी लात। बार-बार क्यों स्मरण करते हैं कि मैंने लाखों रुपये छोड़ दिये। लाखों रुपये आपके पास रहे, तब यह अहंकार, यह 'ईगो' नहीं होगी कि मेरे पास लाखों रुपये हैं। जब छोड़ दी, तब अहंकार आ गया कि मैंने लाखों रुपये छोड़ दिये हैं।

अहंकार अपनी जगह है। आपके छोड़ने से कोई फर्क नहीं पड़ा। अहंकार होता है। धर्म का अहंकार होता है। त्यागी का अहंकार होता है। और त्यागी का अहंकार धर्म के अहंकार से ज्यादा खतरनाक होता है, क्योंकि वह ज्यादा सूक्ष्म है और दिखाई नहीं पड़ता। ज्ञानी का अहंकार होता है कि मैं जानता हूं। यह जो जानने का भाव है, यह सूक्ष्मतम भीतरी दीवालें हैं। यह नहीं जुड़ने देगी समग्र से, सर्व से। यह तोड़ देगी। अहंकार तोड़ने वाली इकाई है। वह आपको तोड़ता है सबसे। आप अकेले रह जाते हैं एक आइने की तरह, एक छोटे से दीप की तरह। आप सबसे टूट जाते हैं। अहंकार तोड़ता है, इसलिए अहंकार परमात्मा की तरफ ले जाने वाला नहीं होता है। अहंकार किसी भी भांति अपने को भर सकता है। स्वार्थ से, सेवा से, ज्ञान से, धन से। न मालूम कितने और किन रूपों से भर सकता है। अहंकार जहां हैं, 'मैं कुछ

हूं' यह भाव जहां है, वहां सर्व के साथ सामंजस्य नहीं हो सकेगा, क्योंकि मैं कुछ हूं यही स्वर, सारे संगीत को वितरित कर देगा। क्या नहीं हो सकता कि यह 'मैं' चला जाए? यह हो सकता है, यह हुआ है। जमीन पर आगे भी यह होता रहेगा। यह आपके भीतर भी घटित हो सकता है।

पहला सुख है ज्ञान को जानना। उसे जाने बिना पिघल जाना, बह जाना। उसके बहने में डर है कि अगर मेरा ज्ञान ही गया तो फिर में 'न कुछ' हो गया। फिर तो मैं नामहीन हो गया। फिर तो 'न कुछ', फिर 'नोबडी' हो गया, अगर मेरा ज्ञान गया तो। जिन्हें परमात्मा को खोजना है, वे स्मरण रखें कि उन्हें' न कुछ' होना पड़ेगा। प्रेम के द्वार पर 'कुछ' होकर जाता है, उसे खाली हाथ वापस लौटना पड़ता है। प्रेम के द्वार पर जो 'न कुछ' होकर जाता है, उसे हमेशा द्वार खुले मिलते हैं और स्वागत मिलता है।

रूमी ने एकक गीत गया है। गाया है कि प्रेमी अपनी प्रेयसी के द्वार पर द्वार गया, द्वार खटखटाया। किसी ने पूछा, कौन हो? प्रेमी ने कहा, मैं हूं तेरा प्रेमी! तुरंत सन्नाटा हो गया। उसने बहुत बार द्वार भड़भड़ाए और कहा—बोलती क्यों नहीं हो? मैं तुम्हारा प्रेमी द्वार पर खड़ा हूं और चिल्ला रहा हूं। आधी रात हो गई, भीतर से किसी ने कहा—लौट जाओ। यह द्वार न खुल सकेगा, क्योंकि प्रेमी के द्वार पर जो आदमी कहता है कि 'मैं हूं' प्रेमी के द्वार उसके लिए कैसे खुल सकते हैं? प्रेम के घर में दो के लिए कोई जगह नहीं है, लौट जा!

वह प्रेमी लौट गया। बरसात आई, सर्दी आई, धूप आई, दिन आए और गए, चांद उगे और गिरे और न मालूम कितने वर्ष बीते और फिर एक दिन, एक रात उस दरवाजे पर फिर दस्तक सुनी गई। और फिर उससे किसी ने पूछा कि कौन हो? बाहर से किसी ने कहा—अब तो मैं नहीं हूं, अब तो तू ही है। और कहते हैं कि द्वार खुल गए। और पीछे पता चला कि द्वार तो खुले ही हुए थे। केवल 'मैं' के कारण बंद मालूम पड़ते थे। 'मैं' नहीं था तो कोई दीवाल न थी।

'मैं' परमात्मा और मनुष्य के बीच में रुकावट है। 'मैं' पर पहली और गहरी और सूक्ष्म चोट जहां कहीं होगी, वहीं 'मैं' की सबसे गहरी जड़े हैं। वह जो जानने का भाव, वह जो जानने का खयाल है, उसे तोड़ना होगा। और सचाई तो यह है कि हम जानते कुछ हैं नहीं। तोड़ने में कठिनाई क्या है? जहां जानते हैं, क्या जाना है, कुछ भी तो नहीं? जीवन ऐसे निकल जाता है जैसे पानी पर कोई लकीर खींचता है। जान क्या पाते हैं? कभी सोचा है, क्या जान पाए हैं? कुछ भी नहीं! लेकिन छोड़ने में भय हो सकता है। उस भय को जो पार नहीं करता, वह परमात्मा के रास्ते में यात्री नहीं हो सकता है। उस भय को पार करना ही होगा।

पहला सूत्र है—ज्ञान के अहंकार को चोट देना। उसे बिखेरना, उसे जानना। चोट देते ही एक अदभुत क्रांति भीतर मालूम देगी। जिंदगी बिलकुल और तरह की दिखाई प.डने लगेगी। जिस पुल के पास से कल गुजरे थे, उसी पुल के पास से गुजरेंगे तो दूसरा दिखाई पड़ेगा, क्योंकि कल आप सोचते थे कि मैं जानता हूं इस पुल को। मैं जि

स पुल को आप 'कुछ' जानते थे वह पुल 'न कुछ' है, लेकिन आज उस पुल के पा स से निकलेंगे और ज्ञात, जानते हुए कि नहीं जानते हैं इस पुल को तो शायद एक दिन ठहर जाएं।

उस फूल को देखें। शायद वह रहस्यपूर्ण मालूम देगा। शायद यह न मालूम कितनी दू र का संदेश लाता हुआ मालूम पड़े। तो उस फूल को भी अगर पूरी तरह शांति से देखें तो शायद परमात्मा के किसी सौंदर्य की झलक वहां दिखाई पड़ जाए। लेकिन जानने वाले व्यक्ति को वह नहीं दिखाई पड़ेगा, क्योंकि वह सब जगह से अंधे की भ ांति निकल जाता है। यह जो ज्ञान का दंभ है, यह आदमी को अंधा कर देता है। य ह चीजों को देखने नहीं देता है। और पैर के नीचे जो दूब है, परमात्मा वहां भी है। आस-पास जो लोग हैं, परमात्मा वहां भी है। हवाएं हैं, आकाश है और बादल हैं। और सब कुछ है और जो कुछ है सबमें वही है। लेकिन वह दिखाई तो नहीं पड़ता है, क्योंकि दिखने वाली आंख नहीं है। यह तो ज्ञान रोके हुए है सारे रहस्य के द्वार परदे की तरह, दीवालों की तरह तो पहली चोट ज्ञान पर करनी पड़ेगी। और अगर ज्ञान पर चोट कर पाएं तो एक दूसरा अभिनव क्षितिज खुलता हुआ दिखाई पड़ेगा जो कि प्रेम का है। जो ज्ञान को छोड़ने को राजी होता है, उसके प्रेम के द्वार खुल जाते हैं।

दूसरा सूत्र है—ज्ञान से तोड़ना अपने को और प्रेम से जोड़ना!

यह जानने का भाव छोड़ दें और प्रेम करने के भाव को जान लें। जानने वाला नहीं जान पाता है और प्रेम करने वाला जान लेता है। लेकिन हम तो कुछ ऐसे हजारों-ह जारों वर्षों से प्रेम के विरोध में पाले गए हैं जिसका कोई हिसाब नहीं। ज्ञान के पक्ष में और प्रेम के विरोध में पाले गए हैं। मैं आपसे निवेदन करता हूं कि ज्ञान के विरो ध में प्रेम से प्रेम के जीवन में, गति करें। प्रेम में चरण रखें। जब प्रेम की दिशा में ि चत्त प्रवाहित हो जाएगा तो परमात्म से ज्यादा निकट कोई भी नहीं है। और अगर ज्ञान की दिशा में बुद्धि काम करने लगेगी तो परमात्मा से ज्यादा दूर कोई नहीं है। विज्ञान कभी परमात्मा को नहीं जान पाएगा, क्योंकि विज्ञान की खोज किसी तथाकि थत ज्ञान की खोज है। इसलिए विज्ञान जितना बढ़ता जाता है, वह कहता है कि ईश् वर कहीं नहीं हैं। साइंस जितनी बढ़ती जाती है, वह कहती है कि नहीं, कहीं कोई ईश्वर नहीं मिलता। कोई ईश्वर नहीं है, ईश्वर गया। विज्ञान उस तथाकथित ज्ञान की अंतिम चरम परिणति है, लेकिन प्रेम तो कदम-कदम पर परमात्मा को पाता है। प्रेम तो मिल भी नहीं पाता बिना परमात्मा के। लेकिन प्रेम की भाषा को गणितज्ञ कैसे समझेगा? ज्ञानी कैसे समझेगा? प्रेम की भाषा उसकी समझ में बिलकुल भी नह ीं है।

एक फकीर था। वह प्रेम के गीत गाता था और प्रेम की बात करता था। अनेक लो ग उससे कहते थे, तुम परमात्मा की बातें नहीं करते। वह कहता कि परमात्मा की बातें क्या करें? जो प्रेम को नहीं जानता, उससे परमात्मा की बातें करना नासमझी है। वह कहता था कि हम तो प्रेम की बातें करते हैं।

जो प्रेम को नहीं जानता, उनसे परमात्मा के लिए क्या कहें? जिन्होंने दीया ही नहीं देखा, उनको सूरज की क्या खबर कहें? वह क्या समझें सूरज को? वह मिट्टी के दीये की ही बातें करते हैं, सूरज की बातें नहीं करते। और जिसने दीया देख लिया है, उसने सूरज भी देख लिया है। वह कहता था कि हम परमात्मा की बात नहीं करते।

वह प्रेम की बात करता था। एक दिन एक पंडित पहुंचा और उसने कहा कि तुम प्रेम ही प्रेम रटे जाते हो। यह भी पता है कि प्रेम कितने प्रकार का होता है? पंडित हमेशा यह पूछता है, कितने प्रकार का प्रेम होता है? कितने प्रकार के सत्य होते हैं? कितने प्रकार के ईश्वर होते हैं? वह तो हर जगह यही बात पूछता है। उस पंडित ने भी उस फकीर से पूछा, कितने प्रकार का प्रेम होता है, मालूम है? वह फकीर बोला, हैरान कर दिया तुमने! प्रेम तो हम जानते हैं। प्रकार का तो हमें आज तक कोई पता नहीं चला। यह प्रकार क्या होता है? प्रेम में और प्रकार?

पंडित हंसा। उसने कहा—हंसने की बारी मेरी है! अपनी झोली से उसने किताब निकाली और कहा—यह किताब देखो। इसमें लिखा है कि प्रेम पांच प्रकार का होता है और तुम प्रेम-प्रेम की बकवास कर रहे हो और प्रकार तक का पता नहीं। क्या खाक तुम्हें प्रेम का पता होगा? अभी अ, ब, स भी नहीं आता है प्रेम का तुम्हें और अभी प्रकार का भी मालूम नहीं है। यह तो पहली क्लास है प्रेम की। पहले प्रकार सीखो, प्रेम के संबंध में शास्र पढ़ो, प्रेम के सिद्धांत सीखो, फिर प्रेम की बातें करो। वह फकीर बोला—भूल है भाई! हम तो प्रेम ही करने लगे। यह तो गलती हो गई। प्रकार सीखने के लिए किसी प्रेम के विद्यालय में भर्ती होना था। मैं नहीं हो पाया। यह गलती हो गई। उसने कहा—सुनो! मैं तुम्हें अपना शास्त्र सुनाता हूं। उसने शास्त्र सुनाया। वे भारी व्याख्या की। जैसा कि पंडितों की हमेशा से आदत रही है। वे भारी व्याख्यान करते रहे हैं, बिना इस बात को जाने कि जिसकी वे व्याख्या कर रहे हैं वह कहीं है ही नहीं।

उसने बड़ी बारीक व्याख्या की। बड़े सूक्ष्म तर्क उठाए। जबाब दिए और फकीर शांति से सुनता रहा। पंडित ने सोचा, ठीक है। फकीर प्रभावित है, क्योंकि वह तो एक ही बात जानता है। या तो विवाद करो या फिर शांत रह जाओ। विवाद मत करो। उसने देखा कि फकीर विवाद नहीं करता है तो वह मान रहा है। तब उसने कहा—सुनी पूरी बात? समझ में आयी? कैसा लगा? तुम्हें कैसा लगा मेरी बात सुनकर? उस फकीर ने कहा—मुझे ऐसा लगा। और एक उसने गीत गाया खड़े होकर। फकीर नाचा और कहा—मुझे ऐसा लगा, जैसे एक दफा, शायद कहीं तुमने सुना हो, जैसे एक दफा एक फूल की बगिया में एक सोने का जौहरी, सोने को कसने के पत्थर को लेकर घुस आया और माली से बोला—देखो, कौन-कौन फूल सच्चे हैं। मैं अभी पता लगाता हूं और अपने सोने के कसने के पत्थर पर फूलों को घिस-घिस कर देखने लगा और सभी फूल कच्चे साबित हुए। सभी फूल झूठे साबित हुए। तो जैसा उस माली को लगा था, वैसा ही मुझे भी लगा, जब तुम प्रेम के प्रकार करने लगे।

प्रेम की भाषा अभेद की भाषा है, ज्ञान की भाषा भेद की भाषा है। ज्ञान तोड़ता है। ज्ञान विश्लेषण करता है, एनेलसिरा करता है। प्रेम जोड़ता है। जोड़ना और तोड़ना। विज्ञान तोड़ता है। तोड़ता ही चला जाता है। आखिर में मिलता है एटम, अणु, आखिरी टुकड़ा। प्रेम-धर्म जोड़ता चला जाता है, जोड़ता चला जाता है। आखिर में मिलता है परमात्मा!

विज्ञान परमाणु पर पहुंचता है, जो कि तोड़ता है। प्रेम परमात्मा पर पहुंचता है, क्योंकि जोड़ता है। जोड़ने से द्वार मिलेगा परमात्मा का, तोड़ने से नहीं। इसलिए पहला सूत्र है--ज्ञान छोड़ना।

दूसरा सूत्र है--प्रेम को फैलने दें और विकसित होने दें। लेकिन कैसे यह प्रेम फैलेगा और विकसित होगा? क्या कोई जबरदस्ती है? क्या जबरदस्ती किसी को जाकर प्रेम करना शुरू कर दीजिएगा? ऐसे लोग भी हैं, जो जबरदस्ती भी प्रेम करते हैं, इस आशा में कि शायद परमात्मा मिल जाए। सेवा करते हैं।

एक स्कूल में एक पादरी ने बच्चों को समझाया कि तुम प्रेम करो सेवा करो। बिना एक सेवा का काम किए सोओ ही मत। दूसरे दिन उसने बच्चों से पूछा कि तुमने कोई सेवा का, प्रेम का कृत्य किया? तीन बच्चों ने हाथ उठाए और कहा कि हमने किया। बड़ा खुश हुआ पादरी। तीस बच्चे थे। कम से कम तीन ने तो बात मानी। एक बच्चे को खड़ा किया और उसने पूछा कि तुमने क्या प्रेम का कृत्य किया? बच्चे ने कहा--मैंने एक बूढ़ी स्त्री को सड़क पार कराई थी। उस पादरी ने कहा--धन्यवाद। बहुत अच्छा किया। दूसरे लड़के से पूछा--तुमने क्या किया? उसने कहा मैंने भी एक बूढ़ी स्त्री को सड़क पार कराई थी।

पादरी को थोड़ा-सा खयाल हुआ कि इन दोनों ने एक ही काम किया है। उसने कहा कि तुमने भी अच्छा किया। तीसरे बच्चे को पूछा कि तुमने क्या किया? उसने कहा कि मैंने भी एक बूढ़ी स्त्री को सड़क पार कराई! पादरी थोड़ा हैरान हुआ। उसने कहा--क्या तुम तीनों ने एक ही सेवा का कृत्य किया? तुमको तीन बूढ़ी स्त्रियां मिल गईं, जिनको सड़क पार कराई? उन्होंने कहा--नहीं, आप गलत समझे। तीन नहीं थीं। बूढ़ी तो एक ही थी। हम तीनों ने उसी को पार कराया। उसने पूछा कि क्या तुम तीन जनों की सहायता की जरूरत पड़ी उसके पार कराने में। उन बच्चों ने कहा--वह पार होना नहीं चाहती थी। हमने जबरदस्ती किसी तरह पार किया। वह तो भागती थी। पार होना ही नहीं चाहती थी।

ये जो सेवक सारी दुनिया में सेवा और सर्विस करते हुए मालूम पड़ते हैं, ये उसी तरह के खतरनाक लोग हैं। इनसे ज्यादा मिस्टीरियस आधुनिक दुनिया में कोई नहीं। ये जबरदस्ती सेवा किए चले जाते हैं। ये उन बूढ़े लोगों को सड़क पार करवा देते हैं, जिनको पार करनी नहीं है।

दुनिया में सेवकों ने जितना उपद्रव किया है, उतना और किसी ने नहीं किया। ये सोचते हैं कि इस भांति हम अपना मोक्ष तय कर रहे हैं। आपको क्या फिक्र है कि आ

पको सड़क पार करनी है या नहीं करनी है। हम अपने मोक्ष का इंतजाम कर रहे हैं। आपको पार करना है या नहीं करना है। हम आपको पार कराए देते हैं।

इस तरह कोई जबरदस्ती प्रेम और सेवा उत्पन्न नहीं होती है। प्रेम देने में कोई भी बाधा नहीं है। प्रेम आपका प्राण बने, यह अच्छा है। प्रेम आपका प्राण कैसे बनेगा? कैसे यह संभव होगा कि प्रेम आपसे प्रवाहित हो उठे?

एक छोटी-सी बात अगर खयाल में आ जाए तो प्रेम को प्रवाहित होने देने में कोई भी बाधा नहीं है। और वह छोटी-सी बात यह है, यह नहीं कि आपके प्रेम से दूसरे को लाभ होगा, बल्कि वह छोटी-सी बात यह है कि प्रेम के अतिरिक्त आप कभी भी आनंद में प्रतिष्ठित नहीं हो सकेंगे।

प्रेम आनंद को प्रतिष्ठा देता है। प्रेम किसी का कल्याण नहीं है। प्रेम आपका ही आनंद है। कभी आपने कोई ऐसा आनंद जाना है, जो प्रेम से रिक्त और शून्य रहा हो? जब भी आप आनंद में रहे होंगे, तब जरूर किसी प्रेम की दशा में ही आनंद में रहे होंगे। लेकिन प्रेम में खुद को खोना पड़ता है, छोड़ना पड़ता है। खुद को छोड़ने की सामर्थ्य जिसमें है, उसी के भीतर उसके प्राण प्रेम से भर सकते हैं। हम अपने को जरा भी छोड़ने को राजी नहीं है। हम अपने को खोने को राजी नहीं हैं। हम तो अपने को बचाना चाह रहे हैं।

एक राजा का रथ सुबह-सुबह सड़क पर आया, धूल उड़ाते हुए। जैसा सभी राजाओं के रथ धूल उड़ाते हैं। न मालूम कितने लोगों की आंखें उससे अंधी हो जाती हैं। वह राजा का रथ भी धूल उड़ाता हुआ आया। एक भिखारी ब्राह्मण सुबह-सुबह घर से बाहर निकला ही था, अपनी झोली लेकर भिक्षा मांगने। खाली झोली थी। लेकिन वह बिलकुल खाली नहीं थी। झोली में चने के कुछ दाने, चावल के कुछ दाने उसने रख लिए थे।

भिखारी भी बहुत सी बातें जानते हैं। झोली अगर खाली हो तो देने वाला जरा देने में अड़चन पैदा करता है। झोली थोड़ी भरी हो तो देने वाले को ऐसा लगता है कि औरों ने दिया है तो हम भी दे दें। तो सभी भिखारी अपनी झोली में थोड़े-से दाने रखकर बाहर निकलते हैं। और यहां कोई मौजूद हो और न डाल कर निकलते हों तो गलती करते हैं। डाल कर निकलना चाहिए। और यहां बहुत-से मौजूद होंगे, क्योंकि ऐसा आदमी खोजना कठिन नहीं है, जो भिखारी न हो। जो कोई भी कुछ मांग रहा है, वह भिखारी है।

सामने ही सूरज निकलता था। राजा का रथ भी आ गया। भिखारी ने कहा, धन्य हैं मेरे भाग्य! रोज-रोज तो वह राजा के द्वार पर, संतरी से थोड़े भीख के दाने लेकर वापस लौट आता था। राजा का दर्शन भिखारी को कैसे हो? राजा के दर्शन के लिए तो खुद राजा होना चाहिए। वह था भिखारी। आज सौभाग्य था कि राजा मार्ग पर मिल गया और उसने कहा कि आज तो रथ को रोक कर झोली फैला दूंगा और जन्म-जन्म को सफल हो जाऊंगा, कृतार्थ हो जाऊंगा।

रथ आ भी गया। रथ रुक भी गया। राजा नीचे उतर भी आया, लेकिन भिखारी तो आखिर भिखारी ही था। वह इतना घबड़ा गया कि राजा के समक्ष वह भूल ही गय ा कि झोली फैलाना है। और इसके पहले कि उसे स्मरण आए कि वह झोली फैलाए, राजा ने खुद अपनी झोली उसके सामने फैला दी।

ऐसा मजाक कभी-कभी हो जाता है कि भिखारी के सामने राजा अपनी झोली फैला देता है। भिखारी तो बड़ी मुश्किल में पड़ गया। उस भिखारी की पीड़ा अनुभव कर सकते हैं, सब अनुभव कर सकते हैं, क्योंकि उसने कभी दिया नहीं है। उसने हमेशा पाया है। उसने कभी देने की कल्पना भी नहीं की। उसने हमेशा मांगा है। देना वह जानता नहीं है।

आप जानते हैं देना? देना मुश्किल से ही कभी कोई जानता है। देना कोई नहीं चाह ता। पाना सभी चाहते हैं। उसने भी नहीं जाना था। वह भी एक सामान्य जन था बे चारा! उसके हाथ झोली में जाते थे और खाली वापस लौट आते थे। उसकी हिम्मत कभी न हो पाती थी कि मुट्ठी भर दाने उठाऊं और झोली में डाल दूं। मुट्ठी भर दा ने देना कठिन है। लेकिन राजा ने कहा--जल्दी करो। मुझे जाना है। जो भी दे सको, दे दो। इंकार करना भी कठिन था। तो उसने मुश्किल से, बहुत मुश्किल से एक च ावल का दाना निकाला और राजा की झोली में डाल दिया! हिम्मत तो की। एक दा ना भी देने की हिम्मत कौन करता है। राजा आया, बैठा और रथ चला गया।

धूल उड़ती रह गई और वह भिखारी पछताता खड़ा रह गया कि यह तो उलटा हो गया। एक दाना और चला गया। एक दाना कितनी मुश्किल से मिलता है। और व ह सारे सपने ही भूल गए, जो मैंने सोचा था कि राजा से मिल जाएगा। वह तो उल टा हो गया। उस दिन भिखारी दिन भर दुखी रहा। हालांकि उसे दिन भर में बहुत-बहुत दाने मिले थे। जितने कि कभी नहीं मिले थे। दिन भर में उसकी झोली पूरी भ र गई ।

सांझ आई तो झोली में जगह नहीं थी, लेकिन आज दुखी था। क्योंकि एक दाना उसे देना पड़ा था। एक दाना कम हो गया। उतनी झोली कभी नहीं भरी थी। शायद शु भ मुहूर्त हुआ। शायद शुभ घड़ी हुई थी, शायद देने के कारण उसके भाग्य, सौभाग्य में परिवर्तित हो गए थे, एक दाना देने के कारण उसे बहुत मिला था, लेकिन वह दुखी था, पछताता था। घर अया तो उदास था।

उसकी पत्नी ने पूछा--इतने दुखी, इतने उदास क्यों हैं? उसने कहा--आज सुबह ही कुछ देना पड़ा है। एक दाना कम लेकर घर लौटा। उसने झोली उलटाई, अभी तक उदास था। झोली उलटाकर रोने लगा। उस भरी झोली में एक चावल का दाना सोने का हो गया था और अब वह छाती पीट-पीट कर रोने लगा कि यह तो बड़ी भूल हो गई। मैंने सारी झोली क्यों न राजा के पास में उलट दी? तो आज सब सोना हो गया होता। लेकिन अब मैं क्या करूं? अब क्या द्वार है, अब क्या मार्ग है?

जो दिया जाता है वह सोने का हो जाता है। देने वाला हृदय प्रेम करने वाला हृदय है। मांगने वाला हृदय प्रेम करने वाला हृदय नहीं है। इसलिए मंदिर में जाकर जो

परमात्मा से मांगता है कि मुझे यह दो, वह दो, वह प्रार्थना नहीं करता है, वह त
ो मांग रहा है। धन्य है वह, जो मंदिर में जाकर दे देता है अपने को।

फरीद एक फकीर था अकबर के समय में। उसके गांव के लोगों ने कहा कि अकबर
तुम्हें बहुत प्रेम करता है। जाओ, अकबर से कुछ गांव की सहायता करवाओ और
गांव में एक स्कूल खुलवा दो। फरीद गया। सुबह-सुबह जल्दी-जल्दी गया, अकबर न
माज पढ़ रहा था। फरीद पीछे जाकर खड़ा हो गया। उसने सोचा कि नमाज पूरी हो
जाए तो मैं कहूं, मौका भी अच्छा है। शायद उस समय अकबर इंकार भी न करे।
अकबर ने नमाज पूरी की और हाथ ऊपर उठाए उसे पता भी नहीं था कि पीछे को
ई खड़ा है। उसने कहा—हे परमात्मा! मेरे राज्य को और बड़ा कर मेरे धन को और
बड़ा कर, मेरी दौलत को दुगुना कर, मुझ पर कृपा कर। फरीद ने यह सुना और
चुपचाप बिना आवाज किए वापस लौट आया। अकबर उठा तो उसने देखा कि फरी
द सीढ़ियां उतर रहा है तो भागा। उसने पूछा—आए और चले गए और बिना कुछ
कहे?

फरीद ने कहा—बड़ी भूल हो गई। मैं तो तुम्हें बादशाह समझता था, पाया कि तुम
भी भिखारी हो। मैं तो सोचकर आया था कि तुमसे आज कुछ मांग लूं, लेकिन मैंने
पाया कि तुम तो खुद ही मांग रहे हो तो मांगने वाले से मांगकर उसे दुख देना मु
झे न हो सकेगा। और फिर अगर मांगना ही होगा तो जिससे तुम मांग रहे थे, उसी
से मैं मांग लूंगा। हम वापस जाते हैं।

यह जो मांगने वाला हृदय है, यही प्रेम न करने वाला हृदय है। हम सब चौबीस घं
टे मांग रहे हैं। और जब सभी लोग मांग रहे हैं तो जिंदगी अगर घृणा से भर जाए,
हिंसा से भर जाए तो आश्चर्य क्या? और अगर ईश्वर की हत्या हो जाए तो आश्
चर्य कैसा? इसमें कौन-सी आश्चर्य की बात है। नहीं, मांगने वाला हृदय धार्मिक हृ
दय नहीं है। बांटने वाला, देने वाला जरूरी नहीं है कि अपना कपड़ा बांट दे और ध
न बांट दे। यह सवाल नहीं है। हृदय, बांटने वाला भाव, हृदय को बांटने वाला भा
व। चौबीस घंटे मौके हैं, चौबीस घंटे चुनौतियां हैं, चौबीस घंटे चैलेंज है। सब तरफ
से, सब तरफ से। सब तरफ से मौका है कि प्रेम आपके दिल में जगे और फैले।
लेकिन इस प्रेम के लिए, खोना पड़ेगा खुद को, देना पड़ेगा खुद को। खुद को खोए ि
बना कोई रास्ता नहीं है। और खोने के दो रास्ते हैं—या तो नशा करें और अपने को
खो दें, जैसा कि सब लोग खोते हैं। शराब पीते हैं और खुद को खो देते हैं। राम-र
ाम जपते हैं और इतना देर जपते हैं कि दिमाग ऊब जाता है और नींद आ जाती
है और खो जाते हैं। कोई नाटक देखता है, संगीत सुनता है और मूर्च्छित हो जाता
है, खो जाता है। अपने को भुला लेने के लिए 'फारगेटफुलनेस' होने के बहुत से रास्
ते हैं। एक तो यह खोना है। यह खोना हम सारे लोग जानते ही हैं। यह खोना नहीं
है, यह सोना है। यह मूर्च्छित होना है।

एक और खोना है प्रेम में। प्रेम में जो खोता है, उसे आत्मा का स्मरण हो जाता है
और नशे में जो खोता है, उसे तो आत्मा का स्मरण और भी भूल जाता है। प्रेम में

कैसे खोएं, क्या करें? क्या करने के लिए हो सकता है? एक बात—अगर आंख खु
ल जाए तो प्रेम आपसे बहेगा। और आप खो सकेंगे और वह बात यह है कि स्वयं
को एक इकाई की तरह समझ लेना भूल है।
आप पैदा हुए हैं। आपको पता है, कैसे और कहां से? आप मर जाएंगे। पता है कह
ां और क्यों? आप जीवित हैं, पता है कैसे? आपकी श्वास चल रही है। पता है कैसे
चल रही है? कौन चला रहा है? क्यों चल रही है?
लोग कहते हैं कि हम यहां हैं। मैं श्वास ले रहा हूं। कभी आपने सोचा है कि इससे
ज्यादा झूठी कोई बात हो सकती है कि आप कहें कि मैं श्वास ले रहा हूं। अगर आ
प श्वास ले रहे हैं तो फिर दुनिया में कोई आपको मार नहीं सकेगा। वह मारे, आप
श्वास लेते चले जाएं, फिर क्या होगा? फिर तो मृत्यु कभी न आ सकेगी, क्योंकि
वह श्वास लेता चला जाएगा। मृत्यु क्या करेगी?
लेकिन हम कहते हैं कि हम श्वास ले रहे हैं। श्वास हम लेते नहीं हैं, श्वास चल रह
ी है। और कहते हम यह हैं कि मैं श्वास ले रहा हूं। जिंदगी भर हम कहते हैं कि
मेरा जन्म। झूठ है बात। मेरा जन्म, क्या हो रहा है, मैं कहां हूं? उस जन्म में कहते
हैं, मेरी श्वास, मेरा जीवन। इसमें हम व्यर्थ ही जुड़ते चले जाते हैं, जो कि कहीं
भी सच्चा नहीं है और जो कि है भी नहीं। इसको जोड़ते-जोड़ते हम मन में कल्पना
कर लेते हैं। ऐसा लगता है कि 'मैं हूं'। और यह 'मैं हूं' मांगने लगता है, क्योंकि
वह बिना मांगे जी नहीं सकता है। इकट्ठा करने लगता है, धन, ज्ञान, त्याग और पू
छने लगता है कि मैं मोक्ष कैसे जाऊं। स्वर्ग कैसे जाऊं? परमात्मा को कैसे पाऊं? व
ह सब 'मैं' की वजह से है। वह, वही 'मैं' जो हूं ही नहीं!
मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूं कि आप अहंकार को छोड़ने की कोशिश करें। और
यदि आपने कोशिश की तो कभी नहीं छोड़ पाएंगे, क्योंकि छोड़ने की कोशिश कौन
करेगा? वही मैं। और हो सकता है कि एक दिन वह यह घोषणा कर दे कि मैं अब
बिलकुल अहंकारी नहीं हूं। मैं तो अब बिलकुल विनम्र हो गया हूं, ह्ययुमिलिटी आ
गई है मुझमें। अहंकार तो मुझ में है ही नहीं।
राजमहल के निकट पत्थरों का ढेर लगा हुआ है। एक बच्चा कहीं से घूमता हुआ अ
ाया और उसने पत्थर उठाया और राजमहल की तरफ फेंका। पत्थर ऊपर उठा, जि
सकी आदत हमेशा नीचे जाने की है, वह ऊपर उठा। स्वाभाविक है कि उसने नीचे
पड़े पत्थरों से कहा—मित्रो! मैं जरा आकाश की सैर को जा रहा हूं।
यह बात बिलकुल ठीक थी, बिलकुल उचित थी, स्वाभाविक थी। नीचे पड़े पत्थर नी
चे पड़े थे। अपनी वेदना से दबे थे, हिल भी नहीं सकते थे। उड़ने की बात तो दूर।
यह कोई महापुरुष पैदा हो गया था पत्थरों में, जो ऊपर जा रहा था। यह कोई अद
भुत अवतारी पुरुष मालूम होता था, जो ऊपर जा रहा था। पत्थरों के लिए कल्पना
तीत था ऊपर की तरफ जाना। और वह जा रहा था और उस पत्थर को भी ऐसा
खयाल हुआ कि मैं ऊपर जा रहा हूं। उठा ऊपर। जाकर महल की कांच की खिड़की
से टकराया। कांच चकनाचूर हो गया। उस पत्थर ने कहा—मैंने कितनी दफा कहा,

मेरे रास्ते में कोई न आए, नहीं तो चकनाचूर हो जाएगा। बिलकुल ही ठीक थी बा
त। कोई झूठ भी नहीं थी। चकनाचूर होकर कांच नीचे पड़ा था, रो रहा था, आंसू
बहा रहा था।

पत्थर ने कहा—कितने दफा कहा? लेकिन न मालूम नासमझों को समझ में नहीं आ
ता कि मेरे बीच में आ जाते हैं और फिर टूटना पड़ता है। हमारे बीच में आने की
जुर्रत कोई न करे। जो भी आएगा, मिटेगा—पत्थर ने ठीक ही कहा। वह नीचे गिरा।
कालीन था महल में बिछा, उस पर गिर गया। उसने कहा—थोड़ा थक गया हूं। ए
क शत्रु का सफाया किया है। लंबी यात्रा की और वह ऐसी यात्रा थी कि मेरे वंशजों
ने कल्पना न की कभी। मेरे पूर्वजों ने कभी जिसकी कामना नहीं की, ऐसी एक म
हान और अभिनव यात्रा मैंने की। थोड़ा विश्राम कर लूं।

वह विश्राम करने बैठ गया। कालीन पर गिरा था। लेकिन उसने कहा—बैठ जाऊं औ
र थोड़ा विश्राम कर लूं। और उसने कहा—धन्य है यह राजपरिवार। कितने अच्छे लो
ग हैं? ज्ञात होता है मेरे आने की खबर पहले ही कर दी गई। कालीन बिछा दिया
गया है। अच्छे लोग मालूम होते हैं। और तभी राजमहल का नौकर दौड़ा आया आव
ाज सुनकर! उसने पत्थर को उठाया और उस पत्थर ने कहा—कैसे भले लोग हैं, कि
तने अधिक प्रेमी कि मुझे उठाकर मेरा स्वागत किया जा रहा है?

और उस नौकर ने उस पत्थर को वापस फेंका। पत्थर को लौटना पड़ा और उसने
अपने मन में कहा कि अब घर की बहुत याद आती है बहुत होमसिकनेस मालूम हो
ता है, बहुत घर की याद आती है । चलें, मित्रों की बहुत याद आती है। वह नीचे
आकर अपने पत्थर के ढेर में गिरा तो उसने कहा—मित्रो! एक अदभुत यात्रा करके
आ रहा हूं। अन्य पत्थर चकित आंखें फाड़े देखते रह गए और उन्होंने कहा—धन्य
हैं हम। जो तुम्हारे बीच जन्म लिया और इतना महान कार्य किया। तुम अपनी आत
मकथा लिखो। आटोबाईग्राफी लिखो। बच्चों के काम आएगी। आगे काम आएगी। बच
चे पढ़ेंगे, प्रसन्न होंगे और पढ़ेंगे कि उनके बीच कोई पैदा हुआ था और पत्थर फूलक
र और बड़ा हो गया।

इसी तरह तो पत्थर फूलकर पहाड़ हो जाते हैं। वह पत्थर फूलकर पहाड़ हो गया,
अहंकार में कि वह अपनी आत्मकथा लिख रहा है। सुनते हैं जल्दी ही छपेगी। जल्दी
ही लोगों को मिलेगी। कई पत्थरों ने पहले भी लिखी है। वह भी लिख रहा है।

क्या हमारा जीवन इस पत्थर से भिन्न है? नहीं, नहीं। बिलकुल ही नहीं। जन्म अज्ञा
त है। मृत्यु अज्ञात है, यात्रा अज्ञात है और हम कहते हैं 'मैं'। इससे ज्यादा झूठ क्य
ा हो सकता है? पत्थर के लिए झूठ था। आपके लिए सच है, अगर ऐसा फर्क करते
हैं तो पत्थर से भी गए-बीते हैं। पत्थर के लिए झूठ था। आपके लिए और झूठ है।
और पत्थर तो पत्थर ही था।

अगर उसे पागलपन का यह खयाल भी आ गया तो ठीक है। आप तो पत्थर नहीं हैं
। लेकिन मनुष्य-जाति के बीच, जिनके हृदय जितने ज्यादा पत्थर हैं, उतने ही ज्याद
ा उनको यह खयाल आता है कि 'मैं' हूं। जो जितना पाषाण है, अपने हृदय में पत

थर, उसको खयाल आता है 'मैं' हूं। इस 'मैं' को समझो। इस 'आइ' को, इस 'ईग
ो' को देखें। इस पत्थर की कहानी से ज्यादा आपकी कहानी भी सिद्ध न होगी।
और जिस दिन यह दिखाई पड़ जाए तो 'मैं' को छोड़ना नहीं पड़ेगा, वह विलीन हो
जाएगा, वह पाया नहीं जाएगा, एक हंसी आएगी और लगेगा कि 'मैं' तो था ही
नहीं। और जिस दिन दिखाई पड़ जाए कि 'मैं' नहीं है। उसी दिन दिखाई पड़ेगा वह
, जो है। उसका नाम ही परमात्मा है। और उसी दिन वह बहने लगेगा, जिसका ना
म प्रेम है। और उसी दिन सारे हृदय के द्वार, एक प्रेम की गंगा, चारों तरफ बहने
लगेगी और एक प्रकाश और एक आनंद और एक थिरक और एक संगीत अपने में
पैदा हो जाएगा। उस पुलक और संगीत का नाम ही धर्म है। उस पुलक, और संगीत
, उस प्रेम, उस आलोक में जो जाना चाहता है, उसी का नाम परमात्मा है।
पत्थरों का परमात्मा मर गया है! और अगर हम प्रेम के परमात्मा को जन्म नहीं दे
सके तो फिर मनुष्य-जाति को बिना परमात्मा के रहना होगा। और सोच सकते हैं
कि बिना परमात्मा के मनुष्य-जाति का क्या होगा?
पत्थर, जो कि जहां प्रेम नहीं है वहां पत्थर होंगे और जहां परमात्मा नहीं है, वहां
पत्थर होंगे। जीवन में जो भी पाने जैसा है, वह प्रेम है। क्यों, क्योंकि प्रेम परमात्मा
की सुगंध के मूल स्रोत को पा लेता है। किसी का भी नहीं है और वह परमात्मा स
बका है। और वह परमात्मा किसी मंदिर और मस्जिद में कैद नहीं है। और वह पर
मात्मा किसी मूर्ति में आबद्ध नहीं है। और वह सब तरफ फैला है।
उसे देखने वाली प्रेम की आंखें चाहिए। अंधे शास्त्रों को पढ़ते रहेंगे तो कुछ भी नह
ीं होगा। और प्रेम की आंख वाली आंख खोल कर देख लें तो सब आनंद हो जाता
है।
मैंने कहा कि ईश्वर मर गया है। जिम्मेदारी आप पर है। ईश्वर पुनरुज्जीवित हो स
कता है। आपके प्रेम से, आपके आनंदित हो उठने से, आपके अहंकार के विलीन हो
जाने से।
ये दो सूत्र मैंने कहे, ज्ञान के तट से जंजीरें तोड़ लें और प्रेम के आकाश की यात्रा
में खोल दें। पाल खोल दें। प्रेम की हवाएं उसे ले जाएं। लेकिन ये दोनों बातें तभी ह
ो सकती हैं जब इन दोनों के बीच एक मध्य बिंदु हो। वह मैंने आपसे अंत में कहा।
वह आपका अहंकार है। अहंकार छोड़ें तो ही ज्ञान से छुटकारा हो सकता है और
अहंकार जाए तो ही प्रेम के और परमात्मा के द्वार खुल सकते हैं। और अहंकार बि
लकुल भी नहीं, उनको विदा करना है जा है ही नहीं, उससे हाथ जोड़ लेना है जो
है ही नहीं, ताकि उसे पाया जा सके, जो है, सदा से है और सदा रहेगा। अभी है,
यही है।
मेरी इन बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना है, मैं बहुत आनंद में हूं। सबके भी
तर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

क्या ईश्वर मर गया है?

प्रेम की भाषा

ईश्वर मर गया है। कैसे पुनरुज्जीवित हो सकता है, इस संबंध में पिछले तीन दिनों में थोड़ी-सी बात मैंने आपसे कही। उस बारे में बहुत से प्रश्न यहां आए हैं। उनमें से थोड़े-से प्रश्नों का, जो कि सभी प्रश्नों के प्रतिनिधि प्रश्न हैं, मैं आपको उत्तर दूंगा। सबसे पहले तो बहुत-से मित्रों ने यह पूछा है—यह बात सुनकर कि ईश्वर मर गया है, हमें बहुत दुख हुआ है?

आपको दुख हुआ इस बात से, मुझे बहुत खुशी हुई है, क्योंकि मैं ऐसे लोगों को भी जानता हूं, जिनसे मैंने कहा कि ईश्वर मर गया है तो उन्होंने कहा, मर जाने दो, हर्जा क्या है? मैं ऐसे लोगों को भी जानता हूं जिनसे मैंने कहा कि ईश्वर मर गया है तो उन्होंने कहा—ईश्वरलाल ठेकेदार? अच्छा आदमी था बेचारा, कैसे मर गया? मैं ऐसे लोगों को भी जानता हूं, जिनसे मैंने कहा कि ईश्वर मर गया तो उन्होंने कह ा—उससे कहा किसने था कि वह जिंदा रहे? जब मुझे यह पता चला है कि आप में से बहुत-से मित्रों को दुख पहुंचा है तो मुझे खुशी हुई। ईश्वर के मरने की बात से जिन्हें दुख पहुंचा है, उन्हें ईश्वर से कोई न कोई लगाव है। न कोई प्रेम है। वे ईश्वर के संबंध में कुछ सोचते और विचार करते हैं। अगर दुनिया में लोगों को इस बात दुख हो रहा है कि ईश्वर मर गया है तो शायद वह पुनरुज्जीवित हो सके।

लेकिन अगर लोगों ने उपेक्षा ग्रहण कर ली तो फिर ईश्वर के पुनरुज्जीवित होने की कोई संभावना नहीं! नास्तिक कभी भी ईश्वर की हत्या नहीं कर सकता है, लेकिन जिनके मन में उपेक्षा है, इनडिफरेंस है, वे ईश्वर की हत्या कर सकते हैं। अगर स ारी दुनिया उपेक्षा से भर जाए तो ईश्वर जिंदा भी रहे तो उसके जिंदा होने का अर्थ क्या होगा?

इसलिए मैं स्वागत करता हूं, अगर किसी को इस बात से दुख पहुंचा हो कि ईश्वर मर गया है। यह बहुत खुशी की बात है। लेकिन इस दुख में कहीं ऐसा न हो कि ह म मरे-मराए ईश्वर को, अपना दुख भुलाने के लिए पूजते चले जाएं। कहीं ऐसा न हो कि मरे-मराए ईश्वर के मंदिर की ही हम पूजा किए चले जाएं, क्योंकि हमें यह जानकर बहुत दुख होता है कि ईश्वर मर गया है, इसलिए मानते चले जाएं कि अभी जिंदा है। यह खतरनाक बात होगी।

अगर ईश्वर मर गया है तो जो ईश्वर मर गया, जिन्हें दुख हो रहा हो, वे चाहे रो एं, चाहे आंसू बहाएं, लेकिन कृपा करें, उस ईश्वर को जाकर दफना दें। पिता मर जाता है, मां मर जाती है तो हम क्या करते हैं? रोते हैं, लेकिन दफना देते हैं। मु र्दे को घर में रखना, मरने से भी ज्यादा खतरनाक बात हो जाएगी। किसी का मर जाना उतना खतरनाक नहीं, लेकिन लाश को घर में रख लेना बहुत खतरनाक है, क्योंकि जो जिंदा है उनके भी मरने की संभावना पैदा हो जाएगी।

ईश्वर तो मर गया , लेकिन मनुष्य के मंदिरों में उसकी पूजा जारी है। इससे खतरा है कि कहीं मनुष्य भी न मर जाए, क्योंकि मुर्दे को घर में रखना बहुत खतरनाक

है। यह तो मैंने कहा कि ईश्वर मर गया है, अब डर यह है कि कहीं आदमी भी न मर जाए। इसके पहले कि आदमी मरे, इस मरे हुए ईश्वर को दफना दें और जब तक इसे दफनाया न जाएगा, तब तक उस ईश्वर को नहीं पाया जा सकता है, जो कि न कभी जन्मता है और न कभी मरता है।

यह मनुष्य-निर्मित ईश्वर है, जो मरा है। यह मनुष्य-निर्मित धर्म है, जो बनते हैं और मिट जाते हैं। ये मनुष्य-निर्मित ग्रंथ हैं, जो लिखे जाते हैं और भूल जाते हैं। यह मनुष्य-निर्मित मूर्तियां हैं, जो गढ़ी जाती हैं और बिखर जाती हैं। मनुष्य जो भी बनाएगा, वह शाश्वत नहीं होगा। बनाया हुआ कुछ भी शाश्वत नहीं हो सकता है, क्योंकि जो बनाया गया है वह मिटने का बीज अपने में लिए होता है।

क्या आपका ईश्वर आपका बनाया हुआ है? अगर है तो चाहे उसे कितना ही छाती से संजोकर रखो, वह मरेगा। अगर आपका ईश्वर आपका बनाया हुआ नहीं है तो आप सब मिलकर कोशिश करें कि वह मर जाए तो भी नहीं मर पाएगा। लेकिन हमारा ईश्वर तो बनाया हुआ है। इसीलिए तो इतना कमजोर, इतना इम्पोटैंट है, इतना नपुंसक है। कहते तो हम हैं कि ईश्वर है सर्वशक्तिमान। लेकिन उस सर्वशक्तिमान ईश्वर के मंदिर के बाहर ही एक सिपाही को बंदूक लेकर खड़ा कर देते हैं कि तुम इसकी रक्षा करो।

बड़ा अदभुत सर्वशक्तिमान यह ईश्वर है, एक सिपाही जिसकी रक्षा के लिए बाहर खड़ा है। वह हमारा बनाया हुआ ईश्वर है, जिसको सिपाही की जरूरत है। जिसके चोरी हो जाने का भय है, जिसे दुश्मनों के द्वारा फोड़े जाने का खतरा है। फिर यह ईश्वर बड़ा कमजोर है। हम इसके सामने प्रार्थनाएं भी करते रहते हैं। कोई प्रार्थना कभी भी नहीं सुनी जाती है।

पिछले तीस-चालीस साल से सारी मनुष्य-जाति प्रार्थना कर रही है, कि अब युद्ध न हो। लेकिन दो महायुद्ध हो गए और दो महायुद्धों में दस करोड़ लोगों की हत्या हो गई। एक-आध आदमी मरने की बात नहीं सुनी ईश्वर ने। लेकिन हर दस-पांच वर्षों में युद्ध हों और करोड़ों लोग मर जाएं, करोड़ों हृदय प्रार्थना कर रहे हैं, और न सुने तो या तो ईश्वर बहरा है या फिर जिस ईश्वर के सामने हम प्रार्थनाएं कर रहे हैं, वह जिंदा ही नहीं है। बहरा ईश्वर भी सुन लेता है। कितना हम चिल्लाते हैं, कितना रोते, गिड़गिड़ाते हैं, लेकिन अब ईश्वर है ही नहीं। हम अपनी ही किसी कल्पित प्रतिमा के सामने खड़े होकर चिल्ला रहे हैं।

लेकिन अगर कोई वहम बहुत दिनों तक पोसा जाए तो हम भूल जाते हैं कि यह पागलपन है। घरों में छोटे-छोटे बच्चे गुड्डे-गुड्डी का विवाह रचाते हैं। हम हंसते हैं और हम रामचंद्र जी का विवाह रचवाते हैं तो समझते हैं कि यह धार्मिक है। उम्र बढ़ने से किसी का बचपन नहीं मिटता है। उम्र बढ़ जाती है, बच्चे बच्चे ही बने रहते हैं।

दो तरह के बच्चे होते हैं—एक छोटे बच्चे और एक बड़े बच्चे। बच्चे गुड्डे-गुड्डियों को कपड़े पहनाते हैं, मिठाई खिलाते हैं तो हम रोज भगवान की मूर्ति को भोग लगाते

हैं और न मालूम क्या-क्या पागलपन करते हैं और सोचते हैं कि हम धार्मिक हैं, इडियाटिक हैं, मूर्खतापूर्ण हैं, जड़तापूर्ण हैं।

बच्चों को माफ किया जा सकता है, बूढ़ों को माफ नहीं किया जा सकता। बच्चे आखिर बच्चे हैं, लेकिन बूढ़े क्या हैं? और बच्चे तो गुड्डे-गुड्डी के साथ थोड़ी देर खेल खेलते हैं और फिर भूल भी जाते हैं, एक कोने में पटक देते हैं, अपना दूसरा काम करने लगते हैं।

लेकिन ये बड़े? जो भगवान की गुड्डे-गुड्डियों-सी मूर्ति बना लेते हैं, मौका आ जाए जो कल तलवार निकाल लेते हैं, हत्या कर देते हैं, लाखों लोगों को मार डालते हैं, क्योंकि इनके भगवान को चोट पहुंच गई, इनके भगवान का अंत कर दिया गया, इनके भगवान को गाली दे दी गई। खून करते हैं, हत्याएं करते हैं, आग लगाते हैं, न मालूम क्या-क्या करते हैं। क्या नहीं किया जमीन पर, क्या नहीं किया इन धार्मिक लोगों ने, इन पूजा करने वाले लोगों ने, मंदिर और मस्जिद बनाने वाले लोगों ने क्या नहीं किया है, जिसको पाप न कहा जा सके?

सब तरह के पाप किए हैं। एक-एक आदमी ने अकेले-अकेले कोई बड़ा पाप नहीं किया है। लेकिन समूहों, संगठनों और धर्मों के नाम पर ऐसे पाप किए गए हैं कि उनको अगर खयाल में भी ले आएं तो ऐसा प्रतीत होता है कि यदि दुनिया में इतने धर्म नहीं होते तो शायद दुनिया ज्यादा धार्मिक होती। इनसे इतना अधर्म आया है, जिसका कोई हिसाब नहीं।

लेकिन हम कहते हैं कि हम धार्मिक हैं। ऐसे लोग, जिनका मस्तिष्क बिलकुल बचकाना है। यह हमारा बनाया हुआ भगवान किसी भी काम का साबित नहीं हुआ है, हो नहीं सकता। आदमी की कमजोरी है। आदमी जो भगवान बनाएगा वह उससे भी ज्यादा कमजोर होगा। स्रष्टा से उसकी सृष्टि कभी ज्यादा ताकत की नहीं होती है। मैं जो बनाऊंगा, वह मुझसे कमजोर होगा। आप जो बनाएंगे, वह आपसे कमजोर होगा। बनाने वालों ने जो चीज बनाई है, वह बड़ी नहीं हो सकती, ताकतवर नहीं हो सकती। यह भगवान तो हमारा बनाया हुआ है। यह हमसे ज्यादा ताकतवर नहीं हो सकता। इसकी सुरक्षा के लिए भी हमारी जरूरत पड़ती है और इसी के सामने हम हाथ जोड़े खड़े हैं, यह क्या पागलपन है? खुद मूर्तियां गढ़ लेते हैं और उनको प्रतिष्ठा देते हैं, उनके सामने हाथ जोड़कर खड़े हो जाते हैं। खुद ही प्रार्थनाएं बना लेते हैं और उनको करने लगते हैं।

यह भगवान मर गया है। न मरा हो तो मर जाना चाहिए। और जिनके मन में धर्म के प्रति थोड़ा प्रेम है, उन्हें इस भगवान के मर जाने में सहायता और सहयोग देना चाहिए। यह विदा हो जाएगा।

स्मरण रखिए—मनुष्य का मन भगवान से मुक्त नहीं हो सकता। लेकिन अगर झूठे भगवान विदा हो जाएं तो एक खालीपन पैदा होगा और उस खालीपन से प्यास पैदा होगी और हम भगवान की खोज में संलग्न होंगे। लेकिन यह जो सब्स्टीटयूट गॉड है, य

ह जो पूरक भगवान है, यह प्यास को पैदा नहीं होने देगा। प्यास पैदा नहीं होने पात ी है और यह पूर्ति कर देता है।

यदि किसी आदमी को रुपये की तलाश हो और हम नकली सिक्के हाथ में दे दें तो वह निश्चिन्त हो जाएगा और सो जाएगा। उसकी खोज बंद हो जाएगी। वह तिजोर ी में ताला लगा देगा और प्रसन्न मन घूमने लगेगा कि सिक्के मेरे पास आ गए, बात खत्म हो गई। अब सिक्कों की खोज भी बंद कर देंगे। अब उसका अन्वेषण भी बंद हो जाएगा, अब उसका श्रम भी बंद हो जाएगा।

यह जो हमारे हाथ में एक परिपूरक भगवान हमें मिल गया है, उससे हमारी असली भगवान की खोज बंद हो गई।

एक रात दो साधु एक पहाड़ी स्थान से निकले। एक साधु वृद्ध था। अपने कंधे पर व ह झोली लटकाए हुए था। पीछे उसका युवा शिष्य था उसके साथ में। बार-बार वह साधु कहने लगा—जंगल है, अंधेरी रात है। अपने शिष्य से पूछने लगा—यहां कोई ख तरा तो नहीं?

उसके शिष्य ने कहा—संन्यासी को और खतरा? रात अधिक हो तो हो। जंगल हो त ो हो। खतरा क्या है। लेकिन थोड़ी बहुत दूर चलकर उस वृद्ध साधु ने फिर पूछा—र ात बड़ी अंधेरी है, अमावस है, रास्ता खतरनाक तो नहीं है कुछ? पूछा था किसी को, गांव में पता लगाया था?

उसे हैरानी हुई कि इस भांति तो इस साधु ने कभी नहीं पूछा। फिर वे एक कुएं के पास ठहरे। उस साधु ने कहा—मैं थोड़ा हाथ-मुंह धो लूं। झोला अपने युवक शिष्य को दिया और कहा कि इसे संभालकर रखना। साधु हाथ-मुंह धोने गया तो युवक ने उस झोले के अंदर देखा कि एक सोने की ईंट पड़ी थी। उसे शक तो हो गया था ि क साधु को खतरा है तो जरूर झोले में कुछ होना चाहिए। नहीं तो खतरा क्या हो गा? उसने वह ईंट देखी। साधु अपने काम में लगा हुआ था। उसने ईंट फेंक दी गड्ढे में और उसकी जगह एक पत्थर उठा कर उसकी झोली में रख दिया। सबस्टीट्यूट ईंट रख दी। एक पूरक ईंट रख दी। वह साधु हाथ-मुंह धोकर आया। उसने अपना झोला जल्दी से कंधे पर टांगा और देखा कि वजन है और मजे से चलने लगा। फिर थोड़ी देर बाद उसने पूछा—अब तो रात गहरी हो गई, क्या कोई गांव करीब नहीं है कि हम रुक जाएं? खतरा तो नहीं है?

उस युवक ने कहा कि कोई खतरा नहीं है, बिलकुल चले चलिए। उस साधु ने कई बार पूछा था, लेकिन उस युवक ने यह नहीं कहा था कि कोई खतरा नहीं है। साधु को शक हुआ। उसने टटोलकर अपनी ईंट देखी। देखा कि ईंट अपनी जगह है। फिर उसने थोड़ी देर में कहा कि मुझे बहुत भय लगता है।

उस युवक ने कहा कि बिलकुल निर्भय हो जाइए, आपके भय को मैं पीछे गड्ढे में फें क आया हूं। उसने घबराकर अपनी झोली खोली। देखा कि उसमें पत्थर की ईंट रख ी हुई थी। उसने कहा—निर्भय हो जाइए और मजे से चलिए, मैं भय को पीछे फेंक आया हूं। वह साधु बोला—हद हो गई! मैं तो इस ईंट को संभाले हुए चल रहा था,

प्राणों से लगाए हुए चले जा रहा था। अगर कोई हमला कर देता मुझ पर ईंट को छीनने की कोशिश करता तो शायद खून-खराबा हो जाता और मैं अपनी जान दे देता, लेकिन इस ईंट को बचाता।

हमारे भगवान इसी तरह की ईंट हैं, जिसको आप संभाले चले जा रहे हैं और खून-खराबा किए जा रहे हैं और मरे जा रहे हैं और झोली खोलकर नहीं देखते कि सोने की ईंट बहुत पहले विलीन हो गई है और पत्थर की ईंट आप ढोए जा रहे हैं। यह मर गया है भगवान। इस मरे हुए भगवान को ढोते रहिए। आपकी मर्जी।

कुछ लोगों को बोझ ढोना अच्छा लगता है तो कोई क्या करे? लेकिन यह बहुत मंहगा पड़ रहा है। सारी मनुष्य-जाति मरी जा रही है। पत्थर के नीचे दबी जा रही है। थोड़ा देखिए खोलकर अपने भगवान को कि वह है क्या? इसे छोड़ना नहीं पड़ेगा। इसे खोलकर देखते ही आप निर्भय हो जाएंगे कि यह पत्थर की ईंट है। भय विलीन हो जाएगा और इसके मरने से दुख भी नहीं होगा। दुख इसलिए हो रहा है कि आप सोच रहे हैं कि ईंट सोने की न हो।

इसलिए अगर आपको कोई यह खबर दे दे कि वह ईंट खो गई तो आप परेशान होकर पूछेंगे कि ईंट के खोने से हमें बड़ा दुख हो रहा है। लेकिन अगर आपको पता चल जाए कि ईंट पत्थर की है तो आप कहेंगे कि ईंट उतर गई, गधे के बोझ से तो हमें बहुत आराम मिल रहा है। मैं आपको कहता हूं कि यदि ईश्वर मर गया है तो उन लोगों के हृदय के लिए खुशी का समाचार है, जिन्हें ईश्वर से कोई प्रेम है।

इस संबंध में बहुत-से प्रश्न पूछे हैं। करीब-करीब उस संबंध में मैंने तीन दिनों में बहुत-सी बातें कही हैं। इसलिए उस संबंध में और ज्यादा कहना ठीक नहीं होगा।

कुछ मित्रों से पूछा है कि कल मैंने कहा कि सेवा खतरनाक है। उन्होंने पूछा है, क्या सेवा प्रेम नहीं है?

मैं कहना चाहूंगा कि प्रेम तो सेवा है, लेकिन सेवा प्रेम नहीं है। फिर से दोहराऊं, प्रेम तो सेवा है, लेकिन सेवा प्रेम नहीं है।

जहां प्रेम होता है, वहां सेवा अनिवार्यतः आ जाती है, लेकिन उसको पता नहीं चलता है कि मैं सेवा कर रहा हूं। और अगर यह पता हो कि मैं सेवा कर रहा हूं तो समझ लेना कि प्रेम नहीं है। सेवक को पूरे वक्त पता चलता है कि मैं सेवा कर रहा हूं। पता न चले तो वह सेवा नहीं करे। वह सेवा करने के लिए सेवा करता है। सेवा उसके लिए एक कृत्य है, एक ड्यूटी है। सेवा उसके लिए एक साधन है, जिसके द्वारा मोक्ष पाना या ईश्वर पाना या कुछ और पाना है।

प्रेमी सेवा करता नहीं है। सेवक सेवा करता है। प्रेम सेवा करता नहीं है, प्रेम से सेवा होती है, निकलती है। जैसे फूल से सुगंध निकलती है, वैसे प्रेम से सेवा होती है, निकलती है। और अगर प्रेमी से पूछें कि क्या तुम सेवा कर रहे हो तो वह कहेगा कैसी सेवा, मैं तो जानता ही नहीं।

एक पहाड़ी पर एक छोटी सी लड़की—होगी कोई बारह-तेरह वर्ष की, अपने छोटे भ ाई को कंधे पर बांध कर पहाड़ पर चढ़ रही थी। पीछे से संन्यासी आया और वह भी पहाड़ चढ़ रहा था।

वह लड़की तो जा रही थी अपने गांव और वह संन्यासी तीर्थ जा रहा था। पसीने से तर-बतर थी लड़की। संन्यासी भी अपना बिस्तर अपने कंधे पर लिए हुए था। लड़ की अपने छोटे-से-भाई को कंधे पर बांधे हुई थी। जब वह करीब पहुंची, भरी दोपह र, सूरज ऊपर आग बरसा रहा था, पहाड़ की सीधी चढ़ाई, पसीने से तर-बतर, थ की-मांदी, श्वास ऊपर चढ़ रही थी। संन्यासी ने उस लड़की के पास जाकर कहा—बे टा! तुझे बहुत बजन लग रहा होगा?

लड़की ने उस संन्यासी की तरफ देखा और कहा—स्वामीजी वजन आप लिए हुए हैं। यह तो मेरा छोटा भाई है।

तराजू पर तौलें तो संन्यासी के बिस्तर में भी वजन होगा और उसके छोटे भाई में भी। लेकिन हृदय के तराजू पर बिस्तर में वजन है और छोटे भाई में वजन नहीं है। सेवा का वजन होता है। प्रेम का कोई वजन नहीं होता। इसलिए सेवा अहंकार से घ नीभूत होती है। सेवक का अहंकार कि मैं सेवक हूं। हम सभी उससे परिचित होंगे, लेकिन प्रेम का कोई अहंकार नहीं होता।

बड़े मजे की बात है। जितना सेवक सेवा करेगा, उतना ही अहंकार पुष्ट होगा कि मैं कुछ हूं। और जो प्रेम में जितना गहरा उतरेगा, वह पाएगा कि जितना अहंकार ि वलीन होता है, उतनी प्रेम में गहराई आती है।

प्रेम का फूल जब खिलता है तो अहंकार अनुपस्थित होता है, ऐबसेंस होता है और सेवा का चक्कर जब बहुत जोर से चलता है तो अहंकार घनीभूत होकर बीच में स्तं भ की भांति खड़ा हो जाता है।

इसलिए मैं कहता हूं कि प्रेम तो सेवा है, लेकिन सेवा प्रेम नहीं है। अब प्रेम एक हा र्दिक संबंध है, सेवा एक बौद्धिक संबंध है। सोच-विचार से संबंध है सेवा का, इसलि ए ऐसा अपमानजनक है। जिसकी हम सेवा करते हैं, उसे निश्चित अपना अपमान क ा अनुभव होता है।

प्रेम सम्मानजनक है। जिसे हम प्रेम देते हैं, वह गौरवांवित अनुभव करता है। प्रेम ि जसे हम देते हैं, वह गौरवांवित होता है, क्योंकि प्रेम देने वाले के पास कोई अहंका र नहीं होता। सेवा जब हमारी कोई करता है तो हमें संकोच लगता है। अपमान मा लूम होता है। किसी से सेवा न लेनी पड़े, ऐसा मालूम होता है, क्योंकि सेवा करने वाले का अहंकार सामने खड़ा होता है, वह मजबूत होता है।

सेवा तो धर्म नहीं है। यद्यपि धार्मिक व्यक्ति बहुत सेवा करते हैं। प्रेम जितना विकि सत होता है, जीवन में सेवा की भूख अपने आप लगनी शुरू होती है।

कोई यह कहे कि जब प्रेम से सेवा आ जाती है तब सेवा से प्रेम भी आ सकता है। तर्क में और गणित में तो ऐसा दिखाई पड़ रहा है, जैसे एक घर में अंधकार छाया है और हम कहें कि अगर अंधकार को निकाल दें तो प्रकाश जल जाएगा, क्योंकि प्र

काश को जलाते हैं तो अंधकार निकल जाता है। तर्क तो बिलकुल ठीक है। लॉजिक का जहां तक सवाल है, बिलकुल ठीक है। प्रकाश को जलाते हैं तो अंधकार निकल जाता है तो अगर अंधकार को निकाल दें तो प्रकाश जल जाएगा, लेकिन ऐसा होगा नहीं।

जीवन में ऐसा नहीं होगा। प्रकाश जलेगा तो अंधकार तो निकल जाएगा, अंधकार निकालने गए तो खुद समाप्त हो जाएंगे। अंधकार को कभी निकाल ही नहीं सकते। प्रकाश के जलने का तो कोई सवाल ही नहीं। तो ऐसा तो होगा कि प्रकाश जल जाए, अंधकार निकल जाए। लेकिन ऐसा कभी नहीं होगा कि अंधकार को आप निकाल दें और प्रकाश जल जाए। अंधकार निकाले नहीं जाते।

तो मेरा कहना है कि प्रेम का दीया जल जाए तो वह सारे तत्व जीवन में विलीन हो जाते हैं, जिनके कारण सेवा के खुलने में, फैलने में बाधा है। अगर प्रेम का तत्व उपलब्ध हो जाए तो सेवा के मार्ग के सारे अवरोध, सारे पत्थर फट जाते हैं। सेवा प्रवाहित होने लगती है। लेकिन कोई चाहे कि हम सेवा को प्रवाहित कर दें और इससे प्रेम का जन्म हो जाए, यह वैसे ही गलत है जैसे कोई सोचे कि हम अंधेरे को बाहर निकाल दें तो घर का दीया जल जाए। कभी नहीं जलेगा।

लेकिन यह भूल बहुत पुरानी है और मनुष्य-जाति ने जिन भूलों के कारण कष्ट उठाया है, यह दुनिया की दो-चार भूलों में से एक है। हम सभी को यह खयाल है। जिस आदमी को खयाल पैदा होता है कि मेरे मन में प्रेम होना चाहिए, वह सोचता है कि घृणा को निकाल कर बाहर कर दूं तो प्रेम आ जाएगा, यह गलत बात है। जिस आदमी के मन में खयाल आता है कि मेरे भीतर क्षमा होनी चाहिए, वह सोचता है कि क्रोध को निकाल कर बाहर कर दूं तो क्षमा आ जाएगी।

जिस आदमी को खयाल होता है कि मेरे भीतर ब्रह्मचर्य आ जाएगा। ये सब एक ही सारिणी की भूलें हैं। वही कि अंधकार को निकाल दें तो प्रकाश आ जाएगा। यह बिलकुल ही अबसर्ड, एकदम गलत है। एकदम गणित ही गलत है। यह कभी हो ही नहीं सकता।

यही तो वजह है कि ब्रह्मचर्य लाने वाला, सैक्स को निकालते-निकालते सैक्स में ही ढूंढता चला जाता है। और ब्रह्मचर्य कभी नहीं आता और क्रोध को निकालने वाला क्रोध को निकाल-निकाल कर और क्रोधी होता चला जाता है और कभी क्षमा नहीं आती।

एक क्रोधी सज्जन एक गांव में निवास करते थे। जैसा कि सभी गांव में सभी सज्जन निवास करते हैं। वह सज्जन भी उस गांव में निवास करते थे। बहुत क्रोधी थे। छोटी-छोटी बात पर क्रोध उनके भीतर जल जाता था। आग बन जाती थी। छोटी-छोटी बात पर आग-बबूला हो उठते थे। पत्नी की हत्या कर दी क्रोध में आकर। एक बच्चे को उठाकर कुएं में फेंक दिया। गांव घबरा गया। गांव में एक संन्यासी आए तो गांव के लोगों ने कहा कि यह परम क्रोधी है सारे गांव में। इसको कोई ठीक करने का उपाय नहीं? संन्यासी ने कहा—इसमें क्या कठिनाई है। क्रोध को छोड़ दो। बिल

कुल सरल-सी तरकीब बताई। जैसा कि सभी संन्यासी बता रहे हैं। क्रोध को छोड़ द
ो, बात खत्म हो जाएगी!

जैसे कोई बीमार हो, कहे कि मैं बीमार हूं और डाक्टर आए और कहे कि इसमें क
या गड़बड़ी है, बीमारी छोड़ दो बात खत्म हुई। नुस्खा बहुत आसान है। मरीज सिर
पकड़े बैठा रहेगा कि यह कहते तो आप ठीक हैं कि हम बीमारी छोड़ दें। कभी कि
सी ने बीमारी छोड़ी है? नहीं, आज तक दुनिया में कोई बीमारी नहीं छोड़ सकता।
हां! स्वास्थ्य पैदा किया जाता है तो बीमारी छूट जाती है।

स्वास्थ्य 'पोजिटिव हैल्थ' है। बीमारी तो नैगेटिव है, नकारात्मक है। बीमारी छोड़ी न
हीं जाती। स्वास्थ्य पैदा किया जाए या स्वास्थ्य पैदा करने की कोशिश की जाए तो
बीमारी नष्ट होती है। अपने आप विलीन हो जाती है। लेकिन उस संन्यासी ने कहा,
क्रोध को छोड़ दो। वह आदमी तो पक्का क्रोधी था। उसने कहा कि मैं कसम खाता
हूं कि क्रोध को छोड़कर रहूंगा।

क्रोधी आदमी ऐसे ही कसम खा लेते हैं अक्सर, क्रोध में। हालांकि उन्हें यह पता नह
ीं कि यह क्रोध का हिस्सा है। यह जो कसम कि मैं क्रोध छोड़कर रहूंगा, चाहे जान
रहे या जाए। बातें वह वही बोल रहा था जो कल तक बोलता था। किसी से झगड़ा
होता था तो वह कहता था कि मेरी जान रहेगी या तुम्हारी।

संन्यासी ने कहा कि क्रोध को छोड़ दो, यह सरल बात है। वह खड़ा हो गया तो उ
सने कहा मैं क्रोध छोड़कर रहूंगा, चाहे जान रहे या जाए। यह वही का वही क्रोध
था। फर्क थोड़े ही था? लेकिन संन्यासी भी खुश हुए कि बड़ा संकल्पवान आदमी है।
ऐसे मूढ़ अक्सर संकल्पवान समझ लिए जाते हैं। यह बड़ा विल-पावर का आदमी है
। संन्यासी ने कहा कि अगर तूने ऐसे संकल्प ही कर लिया तो संन्यासी हो जा। वह
आदमी संन्यासी हो गया। क्रोधी आदमी कुछ भी हो सकता है। जो हत्या कर सकता
है अपनी पत्नी की, वह संन्यासी नहीं हो सकता? यह तो बिलकुल आसान बात है
।

उसने कपड़े-लत्ते वहीं उतारकर फेंक दिए। वह गया बाजार में। कपड़े रंगा कर आ
गया और संन्यासी हो गया। जैसे किसी को भी संन्यासी होना हो तो कपड़े बदल दे
और रंग दे, संन्यासी हो जाए। वह भी संन्यासी हो गया। गांव के लोगों ने कहा कि
है तो परम-तपस्वी! मालूम भी होता है, कितनी शीघ्रता से कितने संकल्प से परिवर्त
न हो गया है। बुद्धिमान आदमी में परिवर्तन धीरे-धीरे होता है, मूढ़ आदमियों में ए
कदम से हो जाता है। उस मुनि ने कहा—ठीक। मैंने बहुत से लोग देखे, लेकिन तेरा
जैसा खोजी मैंने नहीं देखा कि दो मिनिट के भीतर तुझमें परिवर्तन हो गया। उस
संन्यासी ने उससे कहा कि हम तेरा नाम मुनि शांतिनाथ रख देते हैं। वह शांति का
अवतार मालूम होता है। इतनी शीघ्रता से।

मुनि शांतिनाथ जो अभी ढीले से बैठे थे, वह और अकड़कर सीधे हो गए और रीढ़
ऊंची कर ली। लोगों ने कहा कि मुनि शांतिनाथ! वह, जो कि परम क्रोधी था, बिल
कुल आंख बंद करके शांत होकर बैठने लगा।

क्रोध ऐसे तो कहीं विलीन हो नहीं जाएगा। वह भीतर-भीतर घूमता है। पहले निक ल जाता तो थोड़ा-बहुत छुटकारा भी होता। अब वह भी न रहा। अब निकास का कोई द्वार नहीं रहा। कोई 'एग्जिट', कोई भी नहीं।

अब भीतर-भीतर उसका क्रोध घूमने लगा। क्रोध में वह बड़ी तेजी से भाषण करने लगा। क्रोध में कोई भी तेजी से भाषण कर सकता है। क्रोध में वह बड़े ऊंचे सिद्धां तों की बातें बोलने लगा, खंडन-मंडन करने लगा, शास्त्रार्थ करने लगा। क्रोधी कुछ भी कर सकता है और यह सब क्रोध के लक्षण हैं।

दस साल बीत गए। वह क्रोधी व्यक्ति जो कि मुनि शांतिनाथ हो गया, बहुत प्रसिद्ध हो गए। प्रसिद्धि के लिए जो भी गुण चाहिए, सभी उनमें थे। उनमें कोई कमी नहीं थी। नेता होने के लिए, गुरु होने के लिए, क्रोधी होना बहुत जरूरी था। नहीं तो ह ो नहीं सकता था। एक बड़ी राजधानी में आए। वहां उनके बचपन के साथी एक मि त्र रहते थे। उन्हें तो हैरानी थी कि उनका वह परम मित्र और संन्यासी हो गया औ र सुनते हैं मुनि शांतिनाथ कहलाने लगा।

अब तो उन्होंने लंगोटी और कपड़े भी छोड़ दिए थे। अब वह नग्न भी रहने लगे थे। जब क्रोधी आदमी कोई काम करता है तो 'एक्सट्रीम' तक करता है। बीच में कभ ी नहीं रुकता। उन्होंने लंगोट आदि सब छोड़ दिए। अब वह बिलकुल नग्न, परम दि गंबर हो गए थे। वह मित्र उनसे मिलने गया। मित्र तो उनको पहचान गया, लेकिन जो दस साल तक संन्यासी रह चुका था, वह कैसे मित्र को पहचान सकता था? संन् यासी का कोई मित्र होता ही नहीं। संन्यासी का कोई लाग-लगाव होता है?

यद्यपि वह पहचान तो गया, लेकिन बोला नहीं, क्योंकि मित्रता दिखाना एक सामान्य आदमी से अशोभन है। बड़े आदमी, छोटे आदमी से कोई मित्रता कभी नहीं रखते। उनके आप शिष्य हो सकते हैं, वे आपके गुरु हो सकते हैं। मित्र उनके कभी नहीं हो सकते हैं।

बड़ा आदमी हो गया था। महान त्यागी था। मित्र बैठा हुआ था तो उनकी तरफ दे ख भी नहीं रहा था। मैंने उनसे पूछा कि क्यों महानुभाव? उसके हिसाब से मित्र पह चान तो गया कि मुझे पहचान तो लिया है। बार-बार किनारे की आंख से देख लेता था, लेकिन पहचानना नहीं चाहता था।

जब कोई आदमी बड़ा आदमी हो जाता है, तो छोटे आदमियों को सड़क पर पहचान ना पसंद नहीं करता, क्योंकि उनके पहचानने से यह पता भी चलता है कि तुम भी कभी छोटे थे। तब उनसे कभी दोस्ती रही होगी, इसलिए कोई नहीं पहचानता। को ई बड़ा आदमी किसी छोटे आदमी को नहीं पहचानता है। वह भी नहीं पहचाना। इस में कोई कसूर की बात तो नहीं थी। इसमें उसको नाराज होने की कोई जरूरत भी नहीं थी। मित्र ने पूछा—महानुभाव! क्या मैं पूछ सकता हूं कि आपका नाम क्या है? उसने कहा—मेरा नाम? क्या अखबार नहीं पढ़ते हो? आंखें बंद करके जिंदा रहते हो? सारी दुनिया मेरा नाम ले रही है—मुनि शांतिनाथ!

मित्र समझ तो गया कि यह आदमी वहीं का वहीं है, कहीं गया नहीं है। थोड़ी देर संन्यासी कुछ ब्रह्मचर्चा करते रहे। आत्मज्ञान, उपनिषद की बातें बताते रहे। फिर उस मित्र ने पूछा—महानुभाव! क्या मैं पूछ सकता हूं कि आपका नाम क्या है? उन्होंने बड़े गुस्से से उसे देखा। बोले—हद हो गई। मैंने अभी तेरे को बताया है कि मेरा नाम मुनि शांतिनाथ है। भूल गया इतनी जल्दी?

बात आई गई हो गई, फिर ब्रह्मचर्चा चलने लगी। कोई दो मिनट बीते होंगे! उस मित्र ने फिर पूछा—महानुभाव! मैं पूछ सकता हूं कि आपका नाम क्या है? तो वह डंडा उठा लिए। उन्होंने कहा—कह तो दिया कि मेरा नाम मुनि शांतिनाथ है। अगर अबकी दफा पूछा तो वह मजा चखाऊंगा कि जीवन भर याद रहेगा। उस मित्र ने कहा—मैं पहचान गया कि आप वही शांतिनाथ हैं, जो अपने बचपन में साथ रहे और कोई फर्क नहीं हुआ है। इसी बात को पूछने के लिए मुझे तीन दफा नाम पूछकर आपको कष्ट देना पड़ा है।

क्रोध वहीं का वहीं है। ऐसे कहीं कोई क्रोध नहीं छोड़ता है, सो साधु-संन्यासी कभी अभिशाप देते रहे, शाप देते रहे। काहे के लिए ऋषि-मुनि अभिशाप देते रहे कि जाओ कई जन्मों तक भटको, नरक में जाओ, यह हो जाए।

कैसे लोग रहे होंगे? इनको ऋषि-मुनि कौन कहता रहा? वे परम क्रोधी लोग रहे होंगे। क्रोध से ही उनका संन्यास निकला होगा। वह क्रोध भीतर मजबूत रहा होगा। छोटी-छोटी बात पर अभिशाप! ऋषि से और अभिशाप? मुनि से और अभिशाप? यह तो अकल्पनीय है। इसकी तो कोई कल्पना नहीं हो सकती। लेकिन सारी कथाएं, सारे पुराण भरे हैं।

क्रोध ऐसे नहीं जाता है, न जा सकता है। जीवन में कोई भी निषेधात्मक, कोई भी नैगेटिव इमोशन कभी सीधे नहीं हटाया जा सकता। घृणा नहीं छोड़ी जा सकती, क्रोध नहीं छोड़ा जा सकता। हां प्रेम जगाया जा सकता है। और प्रेम जाग जाए तो क्रोध विलीन हो जाता है और घृणा छूट जाती है। वैसे ही जैसे दीया जल जाए तो अंधकार चला जाता है।

इसलिए मैं नहीं कहता कि क्रोध छोड़ो। मैं नहीं कहता कि घृणा छोड़ो। मैं नहीं कहता कि कठोरता छोड़ो। मैं नहीं कहता कि सैक्स, काम छोड़ो। मैं नहीं कहता कि लोभ छोड़ो। छोड़ने की भाषा गलत है। मैं कहता हूं प्रेम को उपलब्ध करो, प्रकाश को उपलब्ध करो। उसकी उपलब्धि, इनका छोड़ना अपने आप बन जाएगी। उसे पा लेना इनका छूट जाना है।

इसलिए जो धर्म छोड़ना सिखाता है, वह धर्म ही नहीं है। जो धर्म पाना सिखाता है, उपलब्ध करना, पॉजिटिव, विधायक रूप से कुछ होना सिखाता है, वही सच्चा है। निषेधात्मक धर्म का ईश्वर मर गया, जो कहता था कि क्रोध छोड़ो, हिंसा छोड़ो। विधायक धर्म के ईश्वर को जन्म देने का इरादा है क्या? जो कहे कि प्रेम को फैलाओ, प्रेम को विकसित करो, प्रकाश को जगाओ। अगर संसार में कभी भी किसी धर्म का राज्य होगा तो विधायक खोज से होगा निषेधात्मक निषेध से नहीं।

इसलिए मैं कहता हूं कि धर्म त्याग नहीं है, धर्म उपलब्धि है। धर्म छोड़ना नहीं है, धर्म है पाना। धर्म संसार का विरोध नहीं है, धर्म है ईश्वर को पा लेना। यह जो वि रोध की भाषा है 'छोड़ने', 'त्यागने', की गलत है। इसलिए मैंने कहा कि प्रेम तो सेवा है, सेवा प्रेम नहीं है।

अंत में बहुत-से ऐसे प्रश्न हैं, जिनमें कोई तारतम्य और कोई संगीत नहीं है। जैसे कोई पूछता है कि ईश्वर कहां रहता है? ठीक है, उन्होंने सोचा कि जब मैंने खबर कर दी कि ईश्वर तो मर गया है तो इतना तो पता ही होगा कि रेजीडेंस कहां है उसका, रहता कहां है यह सज्जन?

तो पूछना उनका स्वाभाविक है कि ईश्वर कहां रहता है। कितने हाथ पैर हैं, कितने मुंह हैं, क्या शक्ल है। अगर आपने देखा है तो क्या उनका रूप बतला सकते हैं? स्वर्ग और नरक है या नहीं? हैं तो उनके बीच फासला क्या है? क्या कोई नरक से स्वर्ग जा सकता है?

दुनिया में जनसंख्या आदमी की बढ़ती जा रही है और कहते हैं कि आत्माएं सीमित होती हैं। फिर यह बढ़ती कैसे जा रही हैं? ऐसे बहुत प्रश्न हैं, अनेक-अनेक प्रकार के।

जब ऐसे बहुत-से प्रश्न मेरे पास होते हैं तो उस दिन मैं एक स्वप्न जरूर देखता हूं। आज भी मैंने वह सपना देखा। उसी सपने को मैं आपसे कहूंगा। जब भी ऐसे बहुत-से प्रश्न मेरे पास होते हैं तो उस दिन में एक सपना जरूर ही देखता हूं। आज दोपहर में मैंने एक सपना देखा। उस सपने को आप से कहूंगा। अब प्रश्नों के उत्तर नहीं दूंगा। हो सकता है उस सपने में इन प्रश्नों के बहुत-से उत्तर मिल जाएं और यह भी हो सकता है कि कोई भी उत्तर न मिले। सपने का क्या भरोसा?

दोपहर में सोया, मैंने एक सपना देखा कि मैं एक बहुत टूटे-फूटे से मकान के सामने खड़ा हूं। उसके सामने ही एक बहुत बड़ी हवेली है। सिर उठाकर देखता हूं तो उस हवेली के ऊपर का आखिरी हिस्सा दिखाई पड़ता है। वह आकाश में कहीं दूर उठता ही चला जाता है और उसके ही सामने एक टूटे-फूटे फाटक और उसके पीछे एक छोटा-सा झोपड़ा है।

सोचा कि यह क्या है? लेकिन स्वाभाविक है। जहां बहुत बड़े मकान होते हैं, उनके सामने छोटे झोपड़े होने जरूरी हैं, नहीं तो बड़े मकान होंगे कैसे? छोटे मकानों को और छोटा करके ही तो बड़े मकान और बड़े होते हैं।

तो एक मकान बड़ा होता चला गया, दूसरा मकान छोटा होता चला गया। धीरे-धीरे एक मकान आकाश छू लेगा और दूसरा मकान जमीन पर बिछ जाएगा और सो जाएगा। ठीक ऐसा ही किसी का मकान है तो मैंने देखा, वह जो टूटा-सा झोपड़ा है, उसके सामने एक तख्ती लगी है। वर्षा में उसके रंग उड़ गए हैं। शायद बहुत दिनों से उसकी पोताई नहीं हुई है। उस पर लिखा हुआ है 'श्री भगवान'।

मैं बहुत घबराया। भगवान का मकान? दिखता है किसी शराबी ने होली का वक्त आया तो तख्ती बदल दी। भगवान का मकान तो बड़ा होना चाहिए। भगवान जो ि

क परम शक्तिशाली है, परमपिता, सबके बनाने वाले, वह कोई झोपड़े में रहेंगे, झो पड़े में?

लेकिन सामने जो तख्ती लगी है, वह तो लगी है। इधर तो लिखना चाहिए श्री भग वान। बिलकुल हिंदी में लिखा है और वह भी बड़े-बड़े अक्षरों में। उधर लिखा है डा क्टर डेविल डी0 डी0 'डाक्टर आफ डिवनिटी' डाक्टर डेविल।

शैतान का घर है यह। और इनको डी0 डी0 किसने दे दी है—यह 'डाक्टर आफ डि वनिटी' कर रहा है। यह धर्माचारी कब हो गया है? डेविल, जो है एक शैतान!

तख्ती में कोई गड़बड़ है और यह श्री भगवान की तख्ती बहुत दिनों से पुती भी नह ीं है और सन्नाटा है। उधर कोई दिखाई भी नहीं दे रहा है, फिर भी मैंने कहा कि जब पूछना ही है तो बजाय शैतान के घर में जाने के भगवान के घर में जाकर पूछूं ।

मैंने वह फाटक खोला, उसमें इतनी धूल जम गई है, जिससे पता चलता है कि यहां कोई आता ही नहीं है। अंदर घुसा तो एक बहुत बड़े कुत्ते को उस झोपड़े के बाहर बैठा देखा तो मैं थोड़ा डरा, क्योंकि कुत्ते कई प्रकार के होते हैं, जैसे आदमी कई प्रकार के होते हैं। पता नहीं किस प्रकार का कुत्ता हो?

एक तो वह कुत्ता होता है, बिलकुल मरियल। उसकी जाति अलग होती है और उस को पहचानने का एक ढंग होता है। बच्चे अगर घर में मिठाई भी खा रहे हों और मरियल कुत्ता आ जाए तो मिठाई खाना छोड़कर फौरन पत्थर उठाकर उसके पीछे भागते हैं।

मरियल कुत्ते में कुछ मैगनिटिव फोर्स होता है, कोई जादू होता है और बच्चे एकदम पत्थर उठा लेते हैं और भागते हैं। चाहे लाख मिठाई खा रहे हों, गुड्डी खेल रहे हों , चाहे कुछ भी कर रहे हों। मरियल कुत्ता बाहर निकलता है तो बच्चे भागकर नि कल आते हैं। पत्थर उठा लेते हैं। वह कुत्ता मरियल होता है। मरियल कुत्ता हमेशा कानून से चलता है। वह गरीब का कुत्ता है। उसको नियम पालन करना पड़ता है, नहीं तो पुलिस वाला कहेगा चलो, रास्ते से बायें चलो।

एक अलसेसियन डाग होता है। वह सड़क के बीच में चलता है। वह कभी बायें नहीं चलता है, क्योंकि पुलिस वाला उसको नमस्कार करता है, क्योंकि वह साहब का कुत्ता है। अब अलसेसियन कुत्ता जब निकलता है, तब बच्चे चाहे घर के बाहर गुल्ल ी-डंडा खेलते होते हों, वह फौरन दरवाजा बंद कर लेते हैं और होम-वर्क करने लग ते हैं। उसको पत्थर नहीं मारते हैं।

वैसे कुत्ते कई तरह के होते हैं, क्योंकि दो तो खास जातियां हैं। तो मैंने कहा कि प ता नहीं यह मरियल कुत्ता है या अलसेसियन कुत्ता है। इसके पास जाना उचित है ि क नहीं। और फिर भी जाना तो था और धीरे-धीरे बढ़ा।

बढ़ने पर थोड़ी हैरानी हुई। करीब जाकर देखा तो वह कुत्ता बिलकुल आंखें बंद कि ए सो रहा था। तो मैंने सोचा श्री भगवान का कुत्ता है। शायद कोई योग-साधना क रता हो। सत्संग से तो पत्थर तक जीवित हो गए हैं। यह तो कुत्ता है। तो सत्संग

के प्रभाव से मालूम होता है कि आंखें बंद कर ली हैं। जैसा कि सुनते हैं ऋषि-मुनि
यों के घर तोते भी वेद-मंत्र पढ़ते थे। ऐसे ही शायद यह कुत्ता भी कोई ध्यान आदि
कर रहा हो! कोई समाधि लगा रहा हो!
तो मैंने सोचा फिर भी संभलकर चलना चाहिए, क्योंकि कोई समाधि बगुले जैसी स
माधि होती है। बगुला समाधि लगाकर बैठता है और मछली को ताकता भी जाता
है। पास गए और कुत्ता कहीं धोखा दे दे और समाधि झूठी निकले तो मुश्किल हो
जाएगी। जैसा कि अक्सर समाधियां झूठी निकलती हैं। पास जाओ तो टूट जाती हैं।
दूर से समाधि मालूम पड़ती है, पास जाओ तो पता चलता है कि समाधि नहीं, धो
खा है।
मैंने कहा पता नहीं किस प्रकार का योगी है। बगुला योगी है कि सचमुच योगी है,
कुछ कहा नहीं जा सकता। योगी है। फिर भी पास जाना जरूरी था। और कितना ह
ी पास चला गया, लेकिन वह तो परम ध्यान में है। वह हिलता-डुलता नहीं है।
तो मैंने कहा, चमत्कार है! एक कुत्ता भी देखो, आदमी को छोड़ो, एक कुत्ता भी भ
ाव के साथ उपलब्ध हो गया है। पता नहीं ब्रह्मलीन है या और कुछ है। स्वभावतः
मैंने हाथ जोड़े और उसको नमस्कार कर ही रहा था कि मुझे खयाल आया कि कहीं
ऐसा तो नहीं है कि कुत्ता मर गया हो और हम सोचते हैं कि ब्रह्मलीन है।
कंकड़ मारकर देखा तो पता चला कि कुत्ता मरा हुआ था और जब मैं उसको हाथ
जोड़ रहा था तभी एक बूढ़ा आदमी बाहर निकला और उसने कहा—क्या करते हो?
मैंने कहा कि मुझे प्रतीत होता है कि यह जीव ब्रह्मज्ञान की स्थिति में है। इसको न
मस्कार करता हूं तो उन्होंने कहा—यह कुत्ता ब्रह्मलोक उपलब्ध कर लिया है। यह अ
दभुत कुत्ता था। यह बड़ा साधक था और बड़ा योगी। इसने सब तरह के योग साधे
और आखिर यह ब्रह्मगति को प्राप्त हो गया।
तो मैंने कहा कि क्या श्री भगवान यहीं रहते हैं? उन्होंने कहा—मालूम होता है आप
कुछ भी नहीं जानते हैं। मैं ही श्री भगवान हूं। वह बूढ़ा आदमी बोला। उस बूढ़े आ
दमी को देखकर मुझे बहुत घबराहट हुई, क्योंकि कभी कल्पना नहीं की थी कि ऐसे
श्री भगवान होंगे। उनके कपड़े भी फटे हुए थे। उनकी हालत बड़ी खराब थी। चश्मे
उनके टूटे हुए थे। एक रस्सी बंधी हुई थी। तो मैंने कहा—विश्वास नहीं आता है। ि
फर मेरा विश्वास में विश्वास भी नहीं है। मुझे शक होता है।
उन्होंने कहा—विश्वास फलदायी होता है। शक करोगे तो भटक जाओगे। संदेह जिसने
किया है, गए नरक में। मैं जो कहता हूं मानो। तो मुझे यद्यपि डर हुआ और मैंने
सोचा कि ठीक ही कहते हैं, भगवान कई रूपों में प्रगट होते हैं, कई अदभुत छवि के
रूप में प्रगट हुए हैं, क्या कहीं हो सकता है कि इस बार इन्हीं बूढ़े का रूप प्रगट ि
कया हो? किस भेष में मिल जाएं, कुछ पता भी नहीं है। तो मैंने जल्दी से झुककर-
नमस्कार किया। वे बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा—आओ, ऊपर आओ।
भीतर मैं गया तो मैं बहुत हैरान हो गया। मैंने देखा कि वहां तो कुछ भी नहीं था।
कोई फर्नीचर भी नहीं था, कोई सामान नहीं था। हम तो सुनते थे कि बड़े सिंहास

न पर भगवान बैठते हैं। वहां कुछ नहीं था। एक छोटी-सी चटाई पर बैठे हुए थे औ
र कुछ कर रहे थे।
मुझे देखकर और हैरानी हुई। मैं तो सोचता था कि क्या इस दुनिया को बनाने की,
बदलने की, गरीबों की, इसकी, उसकी योजना करते होंगे। नये-नये प्राणी बनाते ह
ोंगे! वे एक स्लेट-पट्टी लिए हुए, कुछ किताबें रखे हुए, सी-ए-टी-कैट, कैट मीँस बिल
ली पढ़ रहे थे। आर-ए-टी-रैट, रैट यानी चूहा!
बहुत हैरान हुआ। कैसे भगवान हैं? मैंने उनसे पूछा--यह क्या कर रहे हैं आप?
वे बोले कि मैं संस्कृत के चक्कर में पड़ा-पड़ा बर्बाद हो आया, तब अंग्रेजी सीख रहा
हूं। वह सामने जो शैतान रहता है, उसने पहले अंग्रेजी सीख ली। मैं इस भूल-भुलक
कड़ में पड़ा रहा कि संस्कृत देव-भाषा है, भटक गया। उसने सब जिंदगी, दुनिया जी
त ली। वह अंतर्राष्ट्रीय भाषा सीख गया। हम संस्कृत के पीछे पड़े रहे।
अभी-अभी किसी ने कहा कि तुम पिछड़ते ही जा रहे हो। अंतर्राष्ट्रीय भाषा सीखो त
ो मैं अंग्रेजी सीख रहा हूं। वह अभी-अभी किसी ने कहा कि तुम पिछड़ते ही जा रहे
हो। अंतर्राष्ट्रीय भाषा सीखो तो मैं अंग्रेजी सीख रहा हूं। वह जल्दी से अपनी किता
ब उठाकर बैठ गए और पढ़ने लगे सी-ए-टी कैट, कैट यानी बिल्ली। आर-ए-टी रैट,
रैट यानी चूहा।
मुझे तो इतनी घबराहट होने लगी कि यह क्या हो रहा है। यह कैसे भगवान हैं! मैं
ने कहा--हद कर दी। इस उम्र में अंग्रेजी सीख रहे हो? तो उसने कहा--उम्र का क्या
सवाल है? उम्र का सवाल होता है तुम्हारी दुनिया में, जहां आदमी मरते हैं। यहां
मुसीबत है कि कोई मरता ही नहीं। उम्र का कोई सवाल ही नहीं है यहां तुम्हारी दु
निया में लोग चिल्लाते हैं कि भगवान हमें अमर कर दो और हम यहां अपनी छाती
पर हाथ रखकर रोते हैं कि मरने का कोई उपाय मिल जाए तो ठीक है। कितने-ि
कतने दिन से बैठे हैं? कोई रास्ता ही नहीं मिल रहा है, कोई उपाय ही नहीं है।
अमरता बड़ी खतरनाक है, क्योंकि कभी नहीं मर सकेंगे। इससे ऐसी घबराहट होती
है कि यही बोझ रोज, यही बोर्डम रोज। यही सुबह से लोगों की प्रार्थनाएं, पतित-
पावन चिल्ला रहे हैं दुनिया भर के लोग और हम सुन रहे हैं बैठे। कोई रघुपति राघ
व राजा राम कर रहा है तो कोई हम सुन रहे हैं बैठे। हम इसको सुन रहे हैं। हमा
रा दिमाग खराब हो रहा है।
इधर एक आदमी आया था और उसने सलाह दी कि तुम अपने कान में यंत्र लगवा
लो तो हमने कान में यंत्र लगवा लिया है। जिसकी सुननी होती है यंत्र का बटन द
बा देते हैं, जिसकी नहीं सुननी होती है यंत्र का बटन ऑफ कर देते हैं। तो जो बहु
त अपने वाले हैं, उनकी सुन भी लेता हूं। जो नहीं हैं, उनकी नहीं भी सुनता हूं।
मुझे तो बहुत घबराहट हुई। मैंने तो सोचा यह ढंग दुनिया में ही चलता है, यहां भी
चलता है। और बोले कि अंग्रेजी सीख रहा हूं। जल्दी आता है तो सीख लेंगे, शाय
द शैतान के मुकाबले कुछ जीत भी हो जाए। देखते हैं शैतान मकान बनाता जा रह
ा है। यहां जमीन छूटती जा रही है। मैंने उससे पूछा--लेकिन आपके ऋषि-मुनि कहां

हैं, जो हजारों-हजारों हो गए और यहां स्वर्ग में आ चुके हैं। यह स्वर्ग है न? उन्हों ने कहा--हां यह स्वर्ग है। तो मैंने कहा--वह सामने? तो उन्होंने कहा--वह नरक है। हमने तो सुना था कि नरक में आग की लपटें जलती हैं, लेकिन यहां तो बड़े आरा म-घर बने हुए हैं। बढ़िया मकान और बगीचे लगे हैं। भगवान ने कहा--वह सब शैत ान की करतूत है। उन्होंने सब गड़बड़ कर डाली है। और यहां? हमने कहा--कहां है वह कल्पवृक्ष? उन्होंने कहा--अब कहां है? नदी पर उन्होंने बांध बना लिया है। पा नी इस तरफ आने नहीं देते। सारे राजनीतिज्ञ वहां इकट्ठे हो गए हैं। वह रोज एन्क्रो चमेंट किए चले जाते हैं। जमीन स्वर्ग की हड़पते चले जाते हैं। हमको पीछे हटना प. डा है। हम अकेले रह गए हैं।

ऐसे सौ-दो सौ थोड़े लोग हैं। बुद्ध हैं, महावीर हैं, क्राइस्ट हैं, राम हैं, कृष्ण हैं, वे ऐ से दस-पांच लोग यहां हैं। लेकिन उनसे कोई काम नहीं चलता। ये कोई भी लड़ाकू नहीं हैं। इनसे कहो तो ये कहते हैं कि तुम्हारे एक गाल पर कोई चांटा मारे तो तु म दूसरा गाल उसके सामने कर दो। अब क्या है? ये लड़ने को तैयार नहीं होते! ये कहते हैं कि जो बायें गाल पर चांटा मारे दायां भी उसके सामने कर दो। अब वह शैतान के सब आदमी, सारे प्राइम मिनिस्टर दुनिया के, वहां हैं। सारे मिनिस्टर वह ां हैं। सारे प्रेसीडेंट वहां हैं। सारे धर्म-पुरोहित वहां इकट्ठे हैं। तो मैंने कहा--वे ऋषि-मुनि कहां गए, जो इतने आए थे?

उन्होंने कहा--चूंकि हम बहुत ज्यादा निकट हो गए हैं, मैं तुम्हें अपने दिल की बात कह देता हूं। सौ ऋषि-मुनि आते हैं तो यह मत सोचना कि सौ स्वर्ग में जाते हैं। स ौ में से मुश्किल से एक आता है। और मैंने कहा--निन्यानवे? तो उन्होंने कहा--निन्या नवे तो लोगों को स्वर्ग भेजने का रास्ता बतलाते हैं और वह खुद पीछे के रास्ते से नरक में चले जाते हैं। इतने होशियार हैं ऋषि-मुनि कि जनता से कहते हैं 'स्वर्ग ज ा रहा हूं' और पीछे से 'सीक्रेट-पास' बना रखे हैं उन्होंने। किताबें भी हैं, 'सीक्रेट-पा स' पीछे से गुप्त रास्ते बना रखे हैं। उनसे खुद नरक चले जाते हैं। एकाध कोई भूल -चूक के चक्कर में फंसकर स्वर्ग में आ भी जाता है तो दो-तीन दिन में घबरा जात ा है और एकदम दरवाजे पर धरना दे देता है। कहता है कि हम उपवास करेंगे, अ नशन करेंगे, हड़ताल कर देंगे। हमको नरक भेज दो। मैं बहुत हैरान हुआ। मैंने कहा हम तो जमीन पर से स्वर्ग आने की कोशिश करते हैं। यहां आए हुए लोग नरक जाना चाहते हैं? तो उन्होंने कहा--वह ऋषि-मुनि कहते हैं कि बिना भाषण के रात में नींद नहीं आती। यहां किसको भाषण करें? यहां स्वर्ग में तो कोई सुनने को राजी नहीं, क्योंकि जितने हैं, वे सब खुद ही भाषण देने वाले हैं। और ऋषि-मुनि कहते हैं कि बिना अनुयायियों के हमारे मन को राहत नहीं मिलती है। हमें अनुयायी से, फालोअर से बहुत प्रेम है और फालोअर सब नरक में हैं। वे कहते हैं हम वहीं जाएं गे। वे कहते हैं कि यहां सुबह अखबार नहीं छपता है।

स्वर्ग में कोई अखबार नहीं छपता है--भगवान ने बताया। और नरक में तो अखबार ही अखबार छपते हैं। तो वे ऋषि-मुनि कहते हैं कि बिना अखबार में सुबह नाम पढ़े

, दिन भर हमें बड़ी बेचैनी रहती है, गर्मी लगती है। तो वहीं जाएंगे। तो दो दिन-चार दिन रहते हैं मुश्किल से, फिर नरक में चले जाते हैं। सौ-दो सौ आदमी यहां िटके हैं, हजारों-हजारों साल से। कोई रस नहीं है।
भगवान ने आगे कहा—कई दफा तो मेरा भी मन होता है कि नरक ही चला जाऊं। यहां कोई रस नहीं है। एकदम बोर्डम है। किसी से बात करो तो वह कहता है कि सब असार है। सब ज्ञानी यहां हैं। वे कहते हैं कि सब असार है, सब माया है। किस ी बात में कोई रस नहीं है, कोई संगीत नहीं, कोई नृत्य नहीं।
तो मैंने कहा—यह तो बड़ी घबराहट की बात है। मुझे तो बहुत दया आने लगी है। मैंने तो सोचा था कि आपसे कुछ दया पाऊंगा और मुझे तो आप पर दया आने लग ी है। यह तो बड़े दुख की स्थिति में आप फंसे हैं। आपका छुटकारा कैसे किया जाए ?
उन्होंने कहा—एक तरकीब निकाल ली है। एक वृद्धजन आए थे, उनको मैंने कहा तो उन्होंने कहा कि एक तरकीब करो। पुराना ताला निकाल कर अलग करो। बीच में दीवाल है—नरक में और भगवान के स्वर्ग में और बीच में दरवाजा है, ताला है। उन्होंने कहा—ताला अलग करो। नए ढंग का ताला लगाओ, जिसमें की-होल होता है , जिसमें छेद होता है, चाबी में। चाबी उस की-होल से निकाल कर नरक का मजा देखो कि क्या हो रहा है। उस बूढ़े ने कहा कि इसी तरह तो हम दुनिया में दिन गु जारते हैं। पड़ोसी के की-होल में से देखते रहते हैं कि क्या-क्या चल रहा है। दिन गु जर जाते हैं बड़े सुख से। रातें गुजर जाती हैं बड़े सुख के साथ। पड़ोसी की लीला दे खते रहते हैं कि क्या चल रहा है। प्रेम हो रहा है कि लड़ाई हो रही है कि पत्नी प ति को मार रही है कि क्या हो रहा है। उसे देखने से बड़ा रस आता है। उस बूढ़े ने तरकीब बताई।
हमने एक नया ताला लगा लिया है। उसी की-होल में से दिन गुजार देते हैं। या तो आर-ए-टी रैट, चूहा, सी-ए-टी कैट, बिल्ली, यह पढ़ते हैं या की-होल में से नरक का मजा देखते हैं।
मेरा भी मन हुआ कि उस की-होल में से नरक का मजा देखूं। कौन नहीं देखना चा हेगा? अगर आपके में से कोई होता तो उसका मन भी होता कि छोड़ो इन भगवान को। नरक का मजा देखें, क्या हो रहा है!
मैंने भी उस की-होल में से देखा तो उन्होंने कहा कि यह जो दरवाजा है, वह जो कल्पवृक्ष सूख गया है, जिसके नीचे बैठकर सभी इच्छाएं पूरी हो जाती थीं, उसी को काटकर बना लिया है। इस दरवाजे में एक खूबी है। जिसका भी स्मरण करोगे, इस की-होल में से वही दिखाई पड़ने लगेगा। तो मैंने कहा—हे ऋषि-मुनि! जो तुम नर क में निवास कर रहे हो, तुमको देखना चाहता हूं।
एकदम सामने की-होल में एक दृश्य आ गया। कोई दस हजार से ज्यादा ऋषि-मुनि रहे होंगे। बड़ी भारी सभा हो रही है। सब उस सभा में बड़ी गजब की बातें दिखाई पड़ती थी। उसमें एक बड़ी गजब की बात यह दिखाई पड़ी कि वह सभा बड़े डेमोक्रे

टक ढंग की थी। ऐसा नहीं था कि मैं यहां एक बोल रहा हूं, आप सब सुन रहे हैं और आप सबके साथ अन्याय कर रहा हूं और अकेला बोल रहा हूं।

उस डेमोक्रेटिक सभा में दस हजार आदमी इकट्ठे बोल रहे थे, क्योंकि उनका कहना है कि किसी मनुष्य को यह अधिकार नहीं है कि किसी के ऊपर अनाचार करे। तो वहां दस हजार माइक लगे हुए थे और दस हजार आदमी बोल रहे थे। वहां ऐसा तूफान मचा हुआ था, जो कुछ समझ में नहीं आता था।

मैंने श्री भगवान को कहा कि यह नरक के लोग तो हमसे बहुत आगे निकल गए। जमीन पर ऐसा होता है कि एक आदमी बोलता है, बाकी लोग भी बोलते हैं। लेकिन मन ही मन में बोलते हैं। ऐसा नहीं करते। एक आदमी बोलता है, बाकी लोग अपने मन ही मन में बोलते हैं। ऐसा नहीं होता कि सभी लोग बोलें। यह तो बहुत ही शिक्षित हो गए। यह तो सभी लोग बोलते हैं। यह तो ह्यूमन इक्वैलिटी मनुष्य की समानता का सिद्धांत इन्होंने पूरा कर दिया। यह कोई किसी की सुन नहीं रहे हैं। किसको फुर्सत है?

जमीन पर भी ऐसा होता है। कोई किसी की नहीं सुनता, लेकिन फिर भी ढंग तो हम दिखलाते हैं, सुन रहे हैं, एक ढंग से बैठे रहते हैं, जिससे मालूम होता है कि वे सुन रहे हैं। बैठकर अपनी बातें भीतर-भीतर कहते रहते हैं, लेकिन यह क्या बात हुई?

भगवान ने कहा—यह नरक के लोग बड़े प्रोग्रैसिव हैं, बड़े प्रगतिशील हैं। इनके तो मुकाबले में हमारी पृथ्वी क्या, स्वर्ग को भी इन्होंने बर्बाद कर दिया। और दृश्य बदलते गए। ऋषि नाच रहे हैं, नदियों के किनारे, बड़े आधुनिक ढंग के नाच। देख कर बहुत घबराहट होने लगी।

पूछा तो उन्होंने कहा—इसमें कोई कसूर नहीं है। इन ऋषियों का कहना है कि हमने खूब त्याग-तपश्चर्या की, अब हम उसका फल चाहते हैं। हमने बहुत कष्ट भोगे, बहुत उपवास किए, शरीर को सुखाया। अब हम फल चाहते हैं। हमें सुख चाहिए,। अच्छे मकान चाहिए, एयरकंडीशनर्स चाहिए, नाच चाहिए, शराब चाहिए और शराब के झरने बहा रहे हैं और बगीचे बसा रहे हैं।

मैंने कहा—यह तो बिलकुल स्वाभाविक है। ऐसा तो हमारे मुल्क में भी हुआ है। आजादी के पहले कुछ लोग थोड़ा-सा जेल गए, तपश्चर्या की। पीछे वे कहने लगे, हमको गददी चाहिए, हमको दिल्ली चाहिए, क्योंकि हमने त्याग किया। अब हम भोग करेंगे। ऐसा तो जमीन पर भी हुआ। वही यहां होगा, यह तो सब जगह होगा। जो त्याग किया करेगा, वह भोग करने के लिए ही तो त्याग करेगा।

उन्होंने कहा कि हम छोड़ते हैं तो हम पाने के लिए छोड़ते हैं। वह कहते हैं कि यहां छोड़ेंगे वहां स्वर्ग में हमें मिलेगा। स्वर्ग में नहीं मिला तो वे लोग नरक को चले गए। बहुत घबराहट, बहुत बेचैनी मालूम हुई। श्री भगवान से मैंने कहा—हालत तो बहुत खराब हो गई है। और छोड़िए, इस उम्र में इसको मत सीखिए। अंग्रेजी भाषा कोई आपके पल्ले अब नहीं पड़ेगी।

वे बोले कि कैसे करूं। एक ट्यूटर लगा छोड़ा है। वह आता है सिखाता है, बहुत डांट-डपट बताता है और बहुत परेशान करता है छोटी-छोटी बातों में कहता है, खड़े रहो, बैठो। पुराने ढंग का ट्यूटर है। बेंत बताता है, गाली बकता है, बड़ा गुस्सा जाहिर करता है। मैंने कहा—आपको पता नहीं है। होमवर्क न कर पाएं तो कापी में पांच रुपए का नोट छिपाकर बता दिया करें। उसी वक्त ट्यूटर भी आ गए। वह बूढ़े सज्जन थे। हिंदुस्तान के किसी हाई स्कूल में प्रधानाध्यापक रहे थे। वह आए और उन्होंने आते ही डांटना शुरू किया कि होमवर्क किया है कि नहीं?

श्री भगवान थर-थर कांपने लगे। विषाद हो गया। बहुत घबराहट हुई। उन्होंने कापी निकाली। डरते-डरते पांच रुपए का नोट रखा और कापी दी।

ट्यूटर ने देखा और कहा—शाबाश! आज तुमने होमवर्क किया और अब तू बिलकुल बेफिक्र रह। और ऐसे ही तुमने होमवर्क और किया तो परीक्षा भी देने की अब कोई जरूरत नहीं पड़ेगी। और सदा ही इसी तरह का अनुशासन, इसी तरह का डिसिप्लिन मानो और इसी तरह पंडित जी को पांच से दस, दस से पंद्रह, पंद्रह से बीस देता रहा तो पक्का मान तेरा मैरिट में स्थान निश्चित है। तो उसने कहा—मैं जरा सब्जी ले आऊं। तू आगे अपना काम कर। मैं थोड़ी देर में फिर आता हूं, फिर होमवर्क दे खूंगा।

टीचर तो चला गया। भगवान ने कहा—धन्य हैं आप, आपने अच्छी तरकीब बताई। यह नया टेकनीक है शिक्षा-प्राप्ति का। हमको पता भी नहीं। हम तो पुराने ढंग से आर-ए-टी रैट, आर-ए-टी रैट रटते जा रहे थे। अब तो हम जरूर ही, न सही कुछ हो गए हैं। डी0 डी0 शैतान तो हम भी मैट्रिक तो पास हो ही जाएंगे। अब तो आशा बंधी। मैंने उनसे पूछा—आपकी मातृभाषा क्या है? कुछ लोग कहते हैं संस्कृत है, कोई कहता है अरबी है, कोई कहता है हिब्रू है। आपकी मदर-टंग क्या है?

भगवान ने कहा—बड़ी मुश्किल की बात है। सारी दुनिया के लोग मुझसे कहते हैं, हे अनाथों के नाथ! पर हम हैं सुप्रीम आरफन, हमारे मां-बाप हैं ही नहीं और दुनिया हमको कहती है, हे अनाथों के नाथ! और हमसे ज्यादा अनाथ कोई नहीं है, क्योंकि हमारे कोई मां-बाप नहीं है। जो जमीन पर अनाथ हैं, उनके मां-बाप रहे होंगे। मर गए होंगे। हमारे तो हैं ही नहीं, क्योंकि थे ही नहीं। हम तो परम अनाथ हैं, सुप्रीम आरफन। मैंने पूछा—आपकी कौन-सी मातृभाषा है? बड़ी मुश्किल हुई, हम तो यही सुनते थे कि आपकी कोई खास मातृभाषा है। उन्होंने कहा—मातृभाषा है ही नहीं, क्योंकि हमारी कोई मां ही नहीं है।

मैंने उनसे पूछा—यह बड़ी अजीब बात है। सारी दुनिया में भाषाएं मातृभाषा क्यों कही जाती है? पितृभाषाएं क्यों नहीं कही जातीं? फादर-टंग क्यों नहीं कहते? मदर-टंग क्यों कहते हैं?

वह बेचारे बहुत दिक्कत में पड़ गए। सिर खुजलाने लग गए। कहने लगे। यह तो मेरे कोश में कहीं लिखा भी नहीं है। और शिक्षक ने पढ़ाया भी नहीं है। परीक्षा में आ

एगा भी नहीं। आप कहां-कहां के प्रश्न पूछते हैं? तो मैंने उनसे कहा—फिर मुझसे पू
छ लीजिए।
उन्होंने कहा—आप बता दें तो बड़ी कृपा होगी। मैं नोट कर लूं। उन्होंने अपनी कापी
 निकाल ली नोट करने के लिए। मैंने उनसे कहा—जहां तक मैं समझता हूं इसका ए
क ही कारण हो सकता है। बच्चों की भाषा, मातृभाषा इसलिए कहलाती है कि बच
चे कभी पिता को मां के सामने बोलते देख ही नहीं पाते। मां ही हमेशा बोलती है।
 पिता सुबह उठ भी नहीं पाता कि मां बोलना शुरू कर देती है। और न मालूम क्या
-क्या बोलना शुरू कर देती है। पिता बेचारा डर के मारे अखबार पढ़ता है और मां
 बोलती चली जाती है। पिता किसी तरह नाश्ता करता है और मां बोलती चली ज
ाती है। पिता दफ्तर से लौटता है, खाना खाता है और मां बोलती चली जाती है।
यही क्रम रात में, पिता सोकर सुस्ताने लगता है और मां बोलती चली जाती है। इ
सलिए बच्चे इसको कहते हैं मदर-टंग। यह मातृभाषा है। इसलिए दुनिया में कहीं भ
ी पितृभाषा नहीं कही जाती।
भगवान ने जल्दी से इसे नोट कर लिया। वे बड़े उत्सुक विद्यार्थी मालूम पड़े। मैंने उ
नसे कहा—अब मैं जाऊं? मैं तो आया था आपसे कुछ पाने को। यहां तो हालत उल
टी हुई जा रही है और आप मुझी से पूछने लगे। हम तो सोचते थे कि ज्ञान मिलेगा
, यहां उलटा ज्ञान देना पड़ रहा है। मैं क्या कहूं?
मैं बाहर निकलने लगा तो वे भागे हुए बाहर आए और उन्होंने कहा कि अपना पता
-ठिकाना तो देते जाइए, जरूरत पड़े तो? एक ऐसी तरकीब बता दी परीक्षा पास ह
ोने की। कोई और मौका आ जाए तो पूछने आ जाऊंगा।
मैंने कहा—पता मैं बताए देता हूं, लेकिन पहले से एपाइन्टमेंट अगर नहीं लिया तो ि
मलना बहुत मुश्किल है। तो मैंने उन्हें पता लिखा दिया, 505, कालबा देवी रोड, ज
ीवन जागृति केंद्र। फोन नंबर लिखा दिया 22331 और कहा इसे रख लो। लेकिन प
हले से एपाइन्टमेंट ले लेना, क्योंकि जीवन जागृति केंद्र के लोग बड़े मजबूत हैं। ला
ख सिर-पैर पटकोगे, वे बड़ी मुश्किल से भीतर घुसने देंगे। और मुझसे मिलने नहीं दें
गे। लेकिन तुम भी हठयोग पकड़ कर बैठ ही जाना और कहना कि मैं जाऊंगा नहीं
बिना मिले तो शायद किसी को दया आ जाए और तुमको भीतर ले आएं और चार
-पांच मिनट मिलने का वक्त मिल जाए।
फिर मैंने कहा—मैं जाऊं? तुम्हारी घड़ी में कितने बजे हैं? उन्होंने कहा—घड़ी मेरी ब
हुत दिनों से बंद है। यह तो गांधी बुड्ढा आया था, उस ने मुझको घड़ी भेंट कर दी
थी। मैंने इसे लटका लिया। न इसमें कांटा है, न इसमें डायल है और न कुछ है, न
 कुछ है। लेकिन यहां कोई जरूरत ही नहीं पड़ती कि देखें कि कितना बजा है। तो
मैंने कहा—मुझे जाने दो, मुझे ठीक साढ़े छः बजे क्रास मैदान में पहुंचना है। वहां कु
छ लोग मनोरंजन के लिए इकट्ठा हुए होंगे। उनको देर हो जाएगी तो बहुत दिक्कत
 हो जाएगी। इसी घबराहट में मेरी नींद खुल गई। जागकर बहुत सोचने लगा कि य

ह कैसा सपना है। अब लेकिन अपने से कोई झगड़ा ही नहीं कर सकते कि कैसा सप
ना है।
यह कैसे श्री भगवान हैं, यह कैसा शैतान है? लेकिन हालत ऐसी हो गई है। शैतान
के मकान बहुत बड़े होते चले गए। भगवान का मकान छोटा होता चला गया। शैत
ान ने लोगों की अंतर्राष्ट्रीय भाषा समझ ली, आदमी की कमजोरी समझ ली, इंटरने
शनल लैंग्वेज और कोई भी नहीं है।
आदमी कमजोर है। अंग्रेज भी उसी बात में कमजोर है जिसमें हिंदू। जर्मन भी उसी
बात में कमजोर है, जिसमें अफ्रीकन। कमजोरियां, ह्यूमन वीकनैसेस, एक ही हैं। शै
तान ने आदमी की कमजोरी की भाषा समझ ली। अंतर्राष्ट्रीय भाषा समझ ली। वह
अंग्रेजी, वह अंतर्राष्ट्रीय भाषा ने सारे मनुष्य से कहा है।
भगवान अभी तक अंतर्राष्ट्रीय भाषा नहीं समझ पाया और आदमी जो भगवान से प्रे
म करता है, उन्होंने लोकल लैंग्वेज जान ली है कि हम हिंदू हैं, हम मुस्लिम हैं, हम
ईसाई हैं। उन्होंने खंड-खंड बना लिए। क्या आपको पता है कि शैतान के शिष्यों के
कितने संप्रदाय हैं?
स्वर्ग उजड़ता जा रहा है। नरक बसता जा रहा है। भगवान ने सोचा कि नरक में ज
ाकर रहने लगें तो शायद कुछ राज मिल जाए। एक आदमी मरा। उसकी पत्नी ने
एक प्रेतात्मविद से कहा कि क्या तुम मेरे पति की आत्मा को जिला सकते हो? उ
सने उसके पति की आत्मा को बुलाया। उसकी पत्नी ने उस आत्मा को पूछा कि तु
म कहां हो? क्या तुम सुख में हो, आनंद में हो? उसके पति ने कहा, मैं परम आनं
द में हूं। हे देवी! मैं बहुत परम आनंद में हूं। उसकी पत्नी ने कहा—क्या उससे भी ज
यादा आनंद में हो जितना मेरे साथ थे?
तो उसने कहा—अब तो भय का कोई कारण नहीं है। अब तो मैं काफी दूर हूं। मैं स
च्ची बात कह दूं। तुम्हारे साथ था, उससे बढ़कर भी आनंद में हूं। उसकी पत्नी ने
कहा—इसका मतलब स्पष्ट है कि तुम स्वर्ग में हो। उसके पति ने कहा—नहीं देवी! मैं
नरक में हूं। वह बहुत घबराई। उसने कहा कि नरक में हो और यहां से आनंद में
? उसके पति ने कहा कि जमीन नरक से भी ज्यादा बदतर हो गई है। अब तो नर
क ही मुझे अच्छा लगता है।
तो अगर भगवान भी सोचने लगे हों कि नरक में बस जाएं तो कोई आश्चर्य नहीं,
क्योंकि स्वर्ग बिलकुल उजाड़ हो गया है। वहां अब कोई भी नहीं जाता है। वहां के
दरवाजे पर मिट्टी जमी है। धीरे-धीरे दरवाजे टूट जाएंगे दो-चार वर्षा में। दो-चार व
र्षा और आएंगी। मनुष्य-जाति का वह मकान गिर जाएगा। दो-चार और तूफान आ
एंगे तो बल्लियां भी उखड़ जाएंगी। कुत्ता तो मर गया भगवान का, जो उनका रखव
ाला था। कौन जाने भगवान भी मर गया हो या किसी दिन मर जाए। मैंने आपको
पूर्व सूचना दे दी कि भगवान मर चुके। वह भगवान जो हमने अब तक पुराणों की
कथाओं के आधार पर गढ़े, जो हमने कल्पना के लोक निर्मित किए, वह जा चुके।
क्या किसी दूसरे भगवान को जन्म देने की इच्छा है?

निश्चित ही वह भगवान किसी रूप का भगवान नहीं होगा। उसकी कोई शक्ल नहीं होगी। उसके हाथ-पैर नहीं होंगे, उसके नाम नहीं होंगे, उसके मंदिर नहीं होंगे, उस की मस्जिदें नहीं होंगी। उस भगवान का एक व्यापक विस्तार होगा प्रेम का, आनंद का, शांति का, प्रकाश का, ज्योति का।

भगवान का अर्थ किसी व्यक्ति से नहीं है। इसलिए यह न पूछें कि उसकी शक्ल क्या है और वह कैसे रहता है? भगवान से अर्थ है एक अनुभूति का। कोई नहीं पूछता है कि प्रेम कैसा है और कहां रहता है? तो क्यों पूछते हैं कि परमात्मा कैसा है औ र कहां रहता है?

प्रेम है एक अनुभूति। प्रेम की ही पराकाष्ठा परमात्मा की अनुभूति है। एक व्यक्ति से मैं प्रेम करूं, वह प्रेम कहलाता है और अगर समस्त के प्रति मेरी वही भाव-दशा ह ो जाए तो यह परमात्मा कहलाता है। प्रेम का परम विकास है। यह बच्चों जैसी बा त कि ईश्वर बैठा हुआ है ऊपर और दुनिया बना रहा है, दुनिया चला रहा है, यह बच्चों जैसी बातें छोड़ें। यह बातें गईं। ये बातें छोड़ें कि भगवान ने एक दिन तय कि या और दुनिया बना दी और कहा कि जाओ बन गई दुनिया और चलो। ये बच्चों जैसी बातें छोड़ें।

भगवान ने ऐसी किसी दुनिया को नहीं बनाया है और भगवान और उसकी सृष्टि दो अलग बातें नहीं हैं। क्रिएटर और क्रिएशन दो अलग बातें नहीं हैं। क्रिएटिविटी सर्ज नात्मक ऊर्जा जब अप्रगट होती है तो उसे हम परमात्मा कहते हैं और जब प्रगट हो ती है तो उसे हम सृष्टि कहते हैं। जब हृदय में कोई गीत उठता है तो वह परमात् मा है। और जब वह वाणी से प्रगट हो जाता है तो वह सृष्टि है।

यह समस्त सृष्टि, यह समस्त सत्ता, यह पूरा एग्जिस्टेंस किसी बहुत अंतर-निनाद को अपने भीतर लिए है। कोई गीत, कोई संगीत, कोई आनंद वह फूंकना चाहती है। वह प्रगट हो रहा है। वही प्रगटीकरण यह संसार है। संसार और परमात्मा दो विरो धी बातें नहीं हैं। परमात्मा का ही प्रकार संसार है और जो लोग प्रेम का अनुभव क रेंगे, वह सब तरफ उस परमात्मा की 'छवि को' छवि से भूल में न पड़ जाएं कि य ह तो वही कृष्ण-कन्हैया वंशी बजाते हुए दिखे, लग रहे हैं। धनुर्धारी राम देखने लगे । वह परमात्मा के स्पर्श में सब तरह अनुभव करेंगे। सब तरफ जो है, वही है। लेि कन उसे जानने के लिए, उसे पाने के लिए खुद के भीतर 'न कुछ' जानना पड़ेगा। शून्य हो जाना पड़ेगा।

मैंने कल इसकी बात आपसे कही है कि कैसे शून्य हो सकते हैं। ज्ञान को छोड़ दो और प्रेम को विकसित होने दो। जहां ज्ञान का तट छूटता है और प्रेम के फूल खिल ने शुरू हो जाते हैं, वही वह संगीत पैदा होता है जो समस्त के भीतर छिपा है, जो और खुद के प्राणों को समस्त से जोड़ देता है, वह अनुभव ही परमात्मा है।

ये थोड़ी-सी बातें इन चार दिनों में मैंने आपसे कही हैं। इस आशा में नहीं कि मेरी बातों को आप मान लेना। मान लेने का मैं दुश्मन हूं। मेरी बातों को ढोना मत। मैं

कोई उपदेशक नहीं हूं। न मैं कोई गुरु हूं और न मेरी कोई यह मंशा है कि मेरी बातें कोई माने। फिर मेरी मंशा क्या है?

मैंने जो कहा है उस पर सोच-विचार करना है और सोच-विचार भी उस सीमा तक करना है, जब तक कि उस बात के संबंध में जरा-सा भी संदेह शेष न रह जाए। जरा-सा भी संदेह शेष रहे तो और सोचना, और सोचना। सत्य के संबंध में बहुत जल्दी नहीं करना। बहुत धैर्य, बहुत शांति, बहुत 'पैशेंस' से सोचना, संदेह करना। और संदेह करते-करते, सोचते-विचारते किसी क्षण कोई चीज दिखाई पड़ेगी कि सत्य है तो फिर वह मेरा कहा हुआ सत्य न होगा, किसी और का कहा हुआ नहीं, वह आपका सत्य हो जाएगा और स्मरण रहे, खुद का सत्य ही केवल मुक्त करता है। किसी और का सत्य मुक्त नहीं करता।

तो अंत में एक निवेदन कर दूं। इसका खतरा रोज है। कहीं मेरी बातें आपके भीतर जाकर, बैठकर विश्वास न बन जाएं। कोई मेरी बातों को न मान ले, नहीं तो यह खतरा पैदा हो जाएगा। मेरी बातों को मानना मत, इतनी कृपा करना। चार दिन सुना है, बड़ी कृपा की। अंतिम कृपा की प्रार्थना यह करता हूं कि मेरी बातों को मानना मत। सोचना-विचारना, खोजना, काटना और अगर किसी दिन कुछ बच जाए, वह फिर आपका होगा। और जो आपका है, वही आपकी आत्मा है, वही आपका सत्य है, वही सत्य मुक्त करता है। परमात्मा करे सत्य आपको मुक्त करे, ऐसी प्रार्थना करता हूं। और इतने दिन इतनी शांति से न मालूम कितनी कड़वी-मीठी बातों को कितने प्रेम से सुना, उसके लिए बहुत अनुगृहीत हूं। अंत में पुनः सबके भीतर के परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।